कौल-कल्पतरु

चण्डी

ॐ ह्रीं

ॐ ह्रीं

माघ, २०५० वि०
फरवरी, १९९४

वर्ष - ५२ अंक - ११

ॐ नमः शिवाय

सरस्वती - पूजा एवं महा - शिव - रात्रि - अंक

* शिव - शक्ति की सरल पूजा - विधि, *

* * श्री सरस्वती - कवच, * *

* * * श्री अन्नपूर्णा - विधान * * *

श्री अन्नपूर्णायै नमः

मानद सम्पादक
रमादत्त शुक्ल

सम्पादक
ऋतशील शर्मा

पता
चण्डी कार्यालय,
अलोपीबाग मार्ग,
प्रयागराज–२११००६
(उ० प्र०)

दूर-भाष
६०६७८३

शुल्क भारत में
एक प्रति : रु० ६

वार्षिक शुल्क : रु० ६५
आजीवन शुल्क : रु० ६५०

शुल्क विदेश में
हवाई डाक/समुद्री डाक

वार्षिक : रु० ६००/४००
आजीवन : ६०००/४०००

शुल्क मनीआर्डर या ड्राफ्ट कौल-कल्पतरु चण्डी के नाम से चण्डी कार्यालय,इलाहाबाद के पते पर भेजें।

मुद्रक
परा वाणी प्रेस
अलोपीबाग मार्ग,
प्रयागराज–२११००६

वर्ष ५२] [अङ्क ११
माघ, 'व्यय' सम्वत् २०५० वि० फरवरी, १९९४

शिव शिव हर हर

शिव शिव हर हर, शिव शिव हर हर,
बाघम्बर धर, डमरु सुकर धर। शिव० ॥१
वर त्रि - शूल धर, अभय सु - वर कर,
भस्म - अङ्ग धर जटा - जूट धर। शिव० ॥२
भाल - चन्द्र सर, तीन नयन - धर,
नाग-हार धर, मुण्ड - माल धर। शिव० ॥३
जटा गङ्ग सारङ्ग अङ्ग धर,
उमा - वाम श्रीनाथ दक्ष धर। शिव० ॥४
गरल - कण्ठ धर, नील - कण्ठ धर,
नन्दि - पीठ भव भूत भार धर। शिव० ॥५
क्रिय कर्म कारण अनन्त - सर,
भक्त 'मोति' कर सार सु-घर धर। शिव० ॥६

—गुप्तावतार बाबाश्री

इस अंक में

० भगवान् शिव का आदर्श परिवार और सामाजिक सम्पदा ३२२
० वेदों में देवी सरस्वती के मन्त्र ३२३
० महा-शिव-रात्रि ३२५
० श्रीभैरवी-वन्दना ३२८
० श्रीरुद्र-गीता ३२९
० एक भक्त-भोगी का मार्मिक पत्र ३३१
० साधन-माला ३३३-३४८
१४६ शिव-शक्ति-पूजा की सरल विधि
१४७ नर्मदा अभिलाषाऽष्टक स्तोत्र
१४८ श्रीशिवाष्टोत्तर-शत-दिव्य-नामामृत-स्तोत्रम्
१४९ श्रीअन्न-पूर्णा-विधान
१५० श्रीअन्न-पूर्णा साधना
१५१ बिल्व-पत्र का अर्पण
१५२ श्रीसरस्वती-विश्व-जयं कवचम्
१५३ 'श्रीगिरिजा-दशक'—एक सिद्ध प्रयोग
१५४ विपरीत-प्रत्यङ्गिरा

सम्पादकीय

भगवान् शिव का आदर्श परिवार

और

सामाजिक सम्पदा

परम पिता भगवान् शिव का नित्य-वाहन **'नन्दी'** है। माँ पार्वती का वाहन **'सिंह'** है। दोनों सुपुत्रों—भगवान् गणेश और भगवान् कार्तिकेय के वाहन क्रमशः **'मूषक'** और **'मयूर'** हैं। **'सर्प'** शिव जी का कण्ठ-हार है।

स्पष्ट है कि परम पिता भगवान् शिव के परिवार के सभी सदस्यों के वाहनादि--**नन्दी बैल, सिंह, मूषक, मयूर और सर्प**—परस्पर घोर विरोधी प्रकृति के हैं। फिर भी परिवार में एक दूसरे के प्रति पूर्ण श्रद्धा और एकता की भावना है। विरोधी प्रकृति के उक्त सभी प्राणी अपना वैर-भाव भूलकर अपने-अपने गुणों के आनन्द में रत हैं।

परम पिता भगवान् शिव के इस आदर्श परिवार से आज हमें प्रेरणा लेनी चाहिए। आज जब सर्वत्र छोटी-सी-छोटी इकाई अपने-अपने गुणों का विकास करने के लिए अधिकाधिक स्वतन्त्रता, समानता की चाह प्रकट कर रही है और चारों ओर परस्पर ईर्ष्या, वैर - भाव के कारण सामाजिक जीवन दूषित हो रहा है, तब भगवान् शिव के आदर्श परिवार से प्रेरणा लेकर हमें कर्त्ता के रूप में ऐसे समुदाय का सङ्गठन करना होगा, जो **'समाज - मन्थन'** से निकले **'हलाहल'** विष को पी सके और **'अमृत'** को समाज की सभी इकाइयों के बीच वितरित कर सके।

समाज-पालक के रूप में ऐसे समुदाय का विकास करना होगा, जो **'सिंह'** के समान 'धर्म' के अनुकूल आचरण को पोषित करे।

साथ ही कुत्सित भावों को मारनेवाले ऐसे 'समाज'-कुमारों को जन्म देना होगा, जो एक ओर स्थिर-बुद्धि लक्ष्य से, तो दूसरी ओर संयत-इन्द्रिय-लक्ष्य से सामाजिक-सम्पदा की रक्षा कर सकें।

जब ऐसे समाज की रचना होगी, तभी **सामाजिक वैर-भाव** दूर होगा और भिन्न - भिन्न प्रकृति के होते हुए **भी सामाजिक सम्पदा का चरम विकास** सुलभ हो सकेगा। यही समय की माँग है और महा-शिव-रात्रि, सं० २०५० वि० (१० मार्च, १९९४) के पुनीत अवसर का पावन सन्देश भी है, जिसे भी 'धर्म'-प्रेमी बन्धुओं को सुनना है और सुनाना।

वेदों में देवी सरस्वती के मन्त्र

१. पावका नः सरस्वती, वाजेभिर्वाजिनीवती । यज्ञं वष्टु धियावसुः । (ऋक् १-३-१०)

अर्थात् पवित्र करनेवाली सरस्वती देवी ज्ञान, बल, धन, अन्न आदि समृद्धि-कारक पदार्थों को बुद्धि-युक्त कर्मों द्वारा धारण करने की शक्ति प्रदान करते हुए हमारे यज्ञों, दान-मय कर्मों को कान्ति-युक्त करें तथा सफल बनाएँ ।

२. चोदयित्री सूनृतानां चेतन्ती सुमतीनाम् । यज्ञं दधे सरस्वती । (ऋक् १-३-११)

अर्थात् सत्य तथा सु-मति-पूर्ण वचनों की प्रेरणा देनेवाली अथवा सु-बुद्धि-युक्त जनों को चेतन करनेवाली सरस्वती देवी श्रेष्ठ कर्मों को धारण करती हैं ।

३. महो अर्णः सरस्वती प्रचेतयति केतुना । धियो विश्वा विराजति ।। (ऋक् १-३-१२)

अर्थात् अपने ज्ञान-पूर्ण मधुर व्यवहार से सरस्वती देवी संसार-रूपी समुद्र को आमोद - प्रमोद के कार्यों द्वारा तरङ्गित कर देती हैं । अनेक युक्त गतियों द्वारा सर्वत्र चेतना का सञ्चार कर देती हैं और प्रत्येक कार्य में विराजमान होकर उसे स-चेतन बना देती हैं ।

४. यस्ते स्तनः शशयो मयोभूर्येन विश्वा पुष्यसि वार्याणि ।
यो रत्नधा वसु-विद्यः सुदत्रः सरस्वति ! तमिह धातवे कः ।।(ऋक् १-१६४-४९)

हे सरस्वति देवि ! आपके स्तन शान्ति देनेवाले तथा कल्याण करनेवाले हैं । इनके द्वारा समस्त वरणीय पदार्थों व भावों का पोषण होता है । रमणीय पदार्थों को धारण करने के लिए, सम्यक् पुष्टि प्राप्त करने के लिए सभी प्रकार की शारीरिक व मानसिक धारणा की प्राप्ति के लिए ये हमारे वतमान जीवन को प्रेरित करें ।

५. सरस्वति ! त्वमस्माँ अविड्ढि मरुत्वती धृषती जेषि शत्रून् । (ऋक् ६-३०-८)

अर्थात् सदा प्रवाह - मय रहनेवाली, सुन्दर रूप तथा स्वस्थ प्राण प्रदान करनेवाली देवि सरस्वति ! आप हमें रक्षा, वृद्धि, प्रगति तथा तृप्ति प्रदान करें तथा शत्रुता रखनेवाले पदार्थों, भावों पर विजय प्रदान करें ।

६. अम्बितमे नदी - तमे, देवि - तमे सरस्वति !
अप्रशस्ता इव स्मसि, प्रशस्तिमम्ब ! नमस्कृधि ।। (ऋक् २-४१-१६)

अर्थात् माताओं में आदर्श देवि सरस्वति, आपकी कृपा के अभाव में हम असंस्कृत हो गए हैं । हे माता ! हमें प्रशस्ति प्रदान कर प्रशंसनीय बनाओ ।

शब्द-व्यवहार-रूपी नदियों में श्रेष्ठ देवि सरस्वति ! आपके द्वारा ज्ञान - शिक्षा न मिलने के कारण हम भूखे, अप्रसिद्ध बन गए हैं । ज्ञान प्रदान कर हमें प्रशस्त बनाकर प्रसिद्ध करो ।

देवियों में श्रेष्ठ देवि सरस्वति ! आपकी उपेक्षा के कारण हम असंस्कृत रह गए हैं । हे माता ! आप अपनी प्रेरणा के सञ्चार द्वारा हमें प्रसिद्धि व प्रशस्ति प्रदान करो ।

७. त्वे विश्वा सरस्वति ! श्रितायूंषि देव्याम् । शुन होत्रेषु मत्स्व प्रजां देवि ! दिदिड्ढि नः ।

अर्थात् हे सरस्वति देवि ! जीवनोपयोगी समस्त साधन आपके अधीन हैं। अतः हमें दूसरों को सुख देनेवाले, प्रसन्न करनेवाले उत्तम व्यवहार, पदार्थ तथा सन्तान दो। (ऋक् २-४१-१७)

८. इमा ब्रह्म सरस्वति ! जुषस्व वाजिनीवति ! या ते मन्म गृत्समदा, ऋतावरि ! प्रिया देवेषु जुह्वति ।।

अर्थात् हे सर्व-समृद्धियों से सम्पन्न, ऋत-सत्य-गति-युक्त सरस्वति देवि ! आनन्द को प्राप्त करनेवाले, दिव्यता की कामना करनेवाले आपके जिन गुणों की अपने में 'आहुति' द्वारा स्थापना करते हैं, वे हममें 'आहुति' के रूप में स्थापित हों। (ऋक् २-४१-१८)

९. आ नो दिवो बृहतः पर्वतादा सरस्वती यजता गन्तु यज्ञम् ।
हवं देवी जुषमाणा घृताची शग्मां नो वाचमुशती शृणोतु ।। (ऋक् ५-४३-११)

अर्थात् सङ्गति करने योग्य, दीप्ति-दान से शोभित करनेवाली, शिक्षा-वाणी-संस्कृति की अधिष्ठात्री सरस्वती देवी दिव्य ब्रह्मचर्यादि हेतु से, अभ्युदय की कामना से हमारी पुकार को सुनें और हमारे कर्म श्रेष्ठ विद्या-व्यवहार में प्रकट हों।

१०. पावीरवी कन्या चित्रायुः सरस्वती वीर - पत्नी धियं धात् ।
ग्नाभिरच्छिद्रं शरणं स - जोषा दुराधर्षं गृणते शर्म यंसत् ।। (ऋक् ६-४९-७)

अर्थात् कान्ति-मयी, पवित्रता प्रदान करनेवाली, चित्र-विचित्र भोग प्रदान करनेवाली, वीरों का पालन करनेवाली सरस्वती देवी बुद्धि तथा कर्म को धारण करती हैं। संस्कृति के साधकों को दिव्य पालन-शक्तियों के साथ ही वे अप्रतिम सुख मय शान्ति प्रदान करती हैं।

११. सरस्वत्यै यशो भगिन्यै स्वाहा। (यजुर्वेद २-२० का अंश)

अर्थात् यश और ऐश्वर्य को प्रदान करनेवाली, कीर्ति की भगिनी के सदृश सरस्वती देवी को यह आहुति समर्पित है।

१२. सरस्वत्या वाचा देवतया प्रसूतः प्रसर्पामि। (यजुर्वेद, १०-३० का अंश)

अर्थात् सरस्वती देवी से प्रेरित होकर जीवन-पर्यन्त दिव्य गुण तथा कर्म से युक्त वाणी के प्रति मैं प्रवृत्त रहता हूँ।

१३. सरस्वत्यै स्वाहा, सरस्वत्यै पावकायै स्वाहा, सरस्वत्यै बृहत्यै स्वाहा। (यजुर्वेद, २२)

अर्थात् संस्कृति-रूप-धारिणी, पवित्रता-रूप-धारिणी, बृहत्ता-रूप-धारिणी सरस्वती देवी को आहुतियाँ समर्पित हैं।

१४. पञ्च-नद्यः सरस्वतीमपियन्ति स-स्रोतसः ।
सरस्वती तु पञ्चधा, सो देशेऽभवत् सरित् ।। (यजुर्वेद, ३४-११)

अर्थात् पाँच ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्रवाहित पाँच प्रकार के ज्ञान नदी के समान हैं। 'मन'-रूपी माध्यम के द्वारा ये प्रच्छन्न रूप से सरस्वती देवी की कृपा से प्राप्त होते हैं। सतत प्रवाह - मयी ज्ञान-वाहिनी सरस्वती देवी मस्तिष्क-प्रदेश में पाँच प्रकार से रूप धारण कर प्रवाहित होती हैं।

१५. सरस्वतीमनुमतिं भगं यन्तो हवामहे । वाचं जुष्टां मधुमतीमवादिषं देवानां देवहूतिषु ।।

अर्थात् सन्तों, विद्वानों की गोष्ठियों में सभ्यों द्वारा सेवनीया, मधुरता-युक्त वाणी का प्रयोग कर हम सभी ऐश्वर्य-प्राप्ति का प्रयत्न करते हुए, परमेश्वर के अनुकूल बनानेवाली सरस्वती देवी को पुकारते हैं। (अथर्व-वेद, ५-७-४)

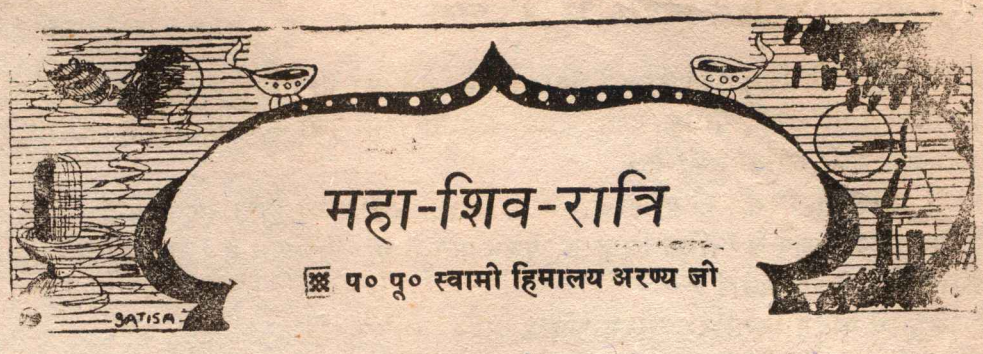

महा-शिव-रात्रि

प० पू० स्वामी हिमालय अरण्य जी

शिव-रात्रि-व्रतं नाम, सर्व-पाप-प्रणाशनम् ।
आचाण्डाल-मनुष्याणां, भुक्ति-मुक्ति-प्रदायकम् ।।

'शिव-पुराण' में कहा गया है कि सृष्टि के प्रारम्भ में ज्योतिर्लिङ्ग उत्पन्न हुआ और **'यजुर्वेद'** का मत है कि **'सर्वे निमेषा जज्ञिरे, विद्युतः पुरुषादधि'** अर्थात् कला-काष्ठा-मय सारा विश्व-प्रपञ्च चैतन्य पुरुष द्वारा उद्भूत हुआ है।

निराकार-निष्प्रपञ्च शिव **'एक'** ही है। उनकी पृथ्वी आदि **(गौरी-पट्ट)** मूर्तियाँ आठ हैं। इस प्रकार सगुण-निर्गुण मिलाकर नौ हैं। ज्योतिर्लिङ्ग बारह हैं। इस प्रकार नौ × बारह = एक सौ आठ शिव महा-पीठ हैं, जो अष्टोत्तर-शत-नाम के अनुसार सर्व-मान्य हैं।

शास्त्रों में २७५ शैव स्थल, २०८ दिव्य लिङ्ग और १२ ज्योतिर्लिङ्ग हैं। महा - शिव के ११ रौद्र रूप हैं। यह संसार २५ तत्त्वों के सङ्घात से बना है। इस प्रकार २५ × ११ = २७५ संख्या की पुष्टि होती है।

'शिव - पुराण' के अनुसार **द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग** निम्न प्रकार हैं—**(१) सोमनाथ** (सौराष्ट्र), (२) **मल्लिकार्जुन** (श्री शैल), (३) **महा-काल** (उज्जैन), (४) **ओङ्कारेश्वर** (नर्मदा - क्षेत्र - वाणेश्वर), (५) **केदारनाथ** (हिमालय), (६) **भीम-शङ्कर** (महा - राष्ट्र—गोदावरी-तट, डाकिनी), (७) **विश्वनाथ** (काशी), (८) **त्र्यम्बकेश्वर** (नासिक—गोदावरी - तट), (९) **वैद्यनाथ** (चिता - भूमि—बिहार), (१०) **नागेश्वर** (**जागेश्वर या यागेश**—दारुक-वन या देवदारु-वन—कूर्माञ्चल), (११) **रामेश्वर** (सेतु-बन्ध), (१२) **घुश्मेश्वर** (शिवालय)।

'शिव - पुराण की तात्त्विक प्रक्रिया के अनुसार यह ब्रह्माण्ड बारह तत्त्वों का सङ्घात है—(१) पृथ्वी, (२) अप्, (३) तेज, (४) वायु, (५) आकाश : पञ्च-महा-भूत, (६) मन, (७) बुद्धि, (८) चित्त (९) अहङ्कार : अन्तःकरण-चतुष्टय, (१०) जीव, (११) प्रकृति और (१२) पुरुष।

अन्यान्य देवी-देवताओं की पूजा पृथक् रूप से न कर केवल शिव-शिङ्ग में पूजा करने से सभी देव-देवियों की पूजा का फल मिल जाता है। भक्ताधीन देवाधिदेव महा - देव आशुतोष के समक्ष ऊँच-नीच का भेद-भाव नहीं है। ब्राह्मण-चाण्डाल का विचार नहीं है। ईश्वर की पूजा - अर्चना में अधिकारी, अनधिकारी, जाति-अजाति क्या ? ब्राह्मण से लेकर चाण्डाल तक—सभी शिव की पूजा कर सकते हैं।

एक ओर उत्तम साधक मुक्ति-कामना से भक्त-वत्सल भोलानाथ की पूजा करते हैं, तो दूसरी ओर दुरात्मा कुटिल, स्वार्थ-परायण लोग प्रलोभन-वश पितृ-सम ज्येष्ठ भ्राता के निधन की कामना से

गोमय या लौह-मय शिव की पूजा कर **'निष्कुम्भिला यज्ञ'** का भी सम्पादन करते हैं ! यही तो ईश्वर की महिमा है । पापी, तापी, साधक, दस्यु, जाति, अजाति–सभी पूजा के अधिकारी हैं । इसीलिए शिव-पूजा का अधिकार सभी जातियों को है ।

मृत्तिका, स्वर्ण, रौप्य, ताम्र, लौह, प्रस्तर और पारद द्वारा शिव-लिङ्ग गठित तथा पूजित होता है । द्रव्य-विशेष से निर्मित लिङ्ग के पूजन-फल में भी विशेषता है । शास्त्रों में लिङ्ग - गठन की प्रणाली निम्न प्रकार बताई है—

लिङ्गस्य यादृग् विस्तारः, परिमाणोऽपि तादृशः । लिङ्गस्य द्विगुणा वेदी, योनिस्तदर्ध-सम्मिताः ।।
सर्वतोऽगुष्ट तो ह्रस्वं, न कदाचिदपि क्वचित् । रत्नादिषु च निर्माणे, मानमिच्छा - वशाद् भवेत् ।।

अर्थात् लिङ्ग के परिमाणानुसार उसका विस्तार करे । लिङ्ग के परिमाण से वेदी का परिमाण दुगुना होना चाहिए । वेदी का आधा योनि का परिमाण होना चाहिए । अंगुष्ठ से कम कोई भी परिमाण न हो । रत्नादि द्वारा लिङ्ग - निर्माण में परिमाण की कोई आवश्यकता नहीं । इच्छानुसार बना सकते हैं ।

आंग्ल शिक्षा-प्राप्त और पाश्चात्य सभ्यता से ग्रस्त लोग **'लिङ्ग'** और **'योनि-पीठ'** का वास्तविक अर्थ नहीं समझ पाते और उनका गलत अर्थ लगाकर नाक-भौं सिकोड़ते हैं । इन शिक्षित व्यक्तियों की अपेक्षा कोल, भील, सन्थाल जैसे अशिक्षित लोग अधिक ज्ञानी हैं, जो शिव - लिङ्ग और योनि - पीठ की महत्ता को समझ कर श्रद्धा और भक्ति के साथ उनकी पूजा-अर्चना किया करते हैं ।

'लिङ्ग' की व्याख्या करते हुए शास्त्रों में स्पष्ट बताया है कि—

आलयं लिङ्गमित्याहुर्न लिङ्गमुच्यते । यस्मिन् सर्वाणि भूतानि, लीयन्ते बुद्-बुदा इव ।।

अर्थात् शारीरिक इन्द्रिय को लिङ्ग नहीं कहते । **'आलय'** को ही **'लिङ्ग'** जानना चाहिए । **'आलय'** अर्थात् सर्व-भूतों का जिसमें लय होता है । जिस प्रकार समुद्र का लय बुद्-बुद् में होता है, उसी प्रकार शिव से उद्भूत बुद्-बुद्-स्वरूप जीव-समुदाय जिसमें लय पाता है, उसे ही **'लिङ्ग'** कहते हैं ।

आकाश का एक नाम **'लिङ्ग'** है । महा - देव **'लिङ्ग-रूपी'** हैं । आकाश महा - देव की विराट् मूर्ति है । **'हं'** बीज आकाश-वाची है, किन्तु **'ह'** शिव की आत्मा है । आकाश ही उनका विराट् रूप है । यथा—

आकाशं लिङ्गमित्याहुः, पृथ्वी तस्य पीठिका । आलयं सर्व-देवानां, लयनाल्लिङ्गमुच्यते ।।

आकाश **'लिङ्ग'** है, **पृथ्वी** उसकी वेदिका है । यही आकाश सर्व - देवो का **'आलय'** और सबका **'लय'** होने से **'लिङ्ग'** नाम से अभिहित हुआ है । 'वेदान्त-सूत्र' में भी उल्लेख है कि **'आकाशस्तु लिङ्गात्'** ।

मूले ब्रह्मा तथा मध्ये, विष्णुस्त्रि-भुवनेश्वरः । तदुपरि महा - देवं, प्रणवाख्यः सदा-शिवः ।।
लिङ्ग-वेदी महा-देवी, लिङ्ग साक्षान्महेश्वरः । तयोः सम्पूजनान्नित्यं, देव-देव्यश्च पूजिता ।।

अर्थात् महा-देव की जो **'लिङ्ग-मूर्ति'** देखी जाती है, उसके मूल में ब्रह्मा, मध्य में विष्णु, तदुपरि प्रणवाख्य (ॐकार प्रतिपाद्य) सदा-शिव एवं **'लिङ्ग-वेदी'** (गौरी-पट्ट या योनि-पीठ) में महा - देवी आदि-शक्ति विराजमान हैं । इसी से केवल **'लिङ्ग-पूजा'** करने से ही सकल देव-देवियों की पूजा हो जाती है । **'शिव-लिङ्ग'** गौरी-पट्ट से संयुक्त रहता है । **'लिङ्ग-रूप'** आकाश तथा **'गौरी - पीठ'** (योनि - पीठ) पृथिवी है ।

महा-देव जी का एक नाम **'त्रि-लोचन'** है। शिव - शक्ति को छोड़कर **'त्रि - लोचन'** और **'त्रि-नयना'** विशेषण अन्य किसी देव-देवी के नाम के साथ नहीं जोड़ा जाता। शिव के **'त्रि - नयन'** का अर्थ है—भूत, भविष्य और वर्तमान अर्थात् कल्प के पूर्व में भी थे, वर्तमान कल्प में भी हैं एवं पुनः कल्पान्त के बाद भी रहेंगे। महेश्वर देवाधि-देव, समस्त भूत-पति और त्रैलोक्य - नाथ एवं विश्वाद्य तथा विश्व-बीज हैं। विश्व के आदि में भी वही हैं एवं कल्पान्त के बाद भी विश्व के बीज-स्वरूप रहेंगे। उसी बीज से जगत्-ब्रह्माण्ड की सृष्टि होती है।

'लिङ्ग - रूपी' महा - देव अनादि, अनन्त, क्षय - व्यय - रहित हैं। इसीलिए उनका एक नाम **'मृत्युञ्जय'** है। महा-देव के ध्यान में **'विश्वाद्यं विश्व-बीजं'** कहा गया है, अतएव उनसे प्रथम 'आकाश' एवं **'आकाश'** से जगदादि उत्पन्न हुआ है। यथा—

निरञ्जनो निराकारः, एक-देवो महेश्वरः। तस्मादाकाशमुत्पन्नं, ततः पृथ्वी - समुद्भवः॥

अर्थात् निरञ्जन एक - देव महेश्वर से आकाश उत्पन्न हुआ, आकाश से अनिल, अनिल से अनल, अनल से सलिल एवं सलिल से पृथ्वी समुद्भूत हुई है।

जो लोग दुर्भाग्य-वश तन्त्रादि शास्त्रों के प्रमाणों को नहीं मानते और 'तन्त्र' नाम से ही चिढ़ जाते हैं, उनके सन्तोष के लिए **'वेद'** और **'उपनिषद्'** भी यहाँ उद्धृत हैं। **'तैत्तिरीय उपनिषद्'** में बताया है—

तस्माद् वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः। आकाशाद् वायुः वायोरग्नि ··· इत्यादि॥

अर्थात् आकाश से वायु, वायु से अग्नि उत्पन्न ···इत्यादि। इस प्रकार मूल तत्त्व **'आकाश'** ही है। इसी से आकाश से सर्व-भूतों का उदय एवं पुनः आकाश में ही सर्व-भूतों का विलय होता है—**'आकाशो वै नाम रूपयोर्निर्वहिता'** अर्थात् आकाश ही नाम-रूप का प्रकाशक है। **'सैषा भार्गवी वारुणी विद्या परमे व्योमन् प्रतिष्ठिता'**—**'ॐ खं ब्रह्म।'** 'ख' आकाश अर्थात् ब्रह्म ही आकाश है।

अंगुष्ठ-मात्रः पुरुषः ('कठ'-श्रुति २/१/१२)—परम-पुरुष शिव सर्व-मय होते हुए भी साधक के हृदय-मध्य में अंगुष्ठ परिमित स्थान में अवस्थित हैं। 'महाकाश' जब घटाकाश में परिणत होता है, तब सर्व - व्यापक ईश्वर 'जीवेश्वर' होकर जीव के हृदय - देश में अवस्थित रहते हैं। अतः जब तक धरातल में जीवित रहा जाए, तब तक प्रत्यह ब्रह्म-मय शिव-लिङ्ग की पूजा करे। शिव निर्गुण हैं। केवल माया द्वारा उपाधि-विशिष्ट होकर स-गुण हैं। शक्ति-हीन शिव निरर्थक हैं।

यदि शक्ति या माया-कर्त्तृक उपाधि युक्त न हो, तो गुण का अवलम्बन कहाँ? अवलम्बन-हीनता के कारण वे निर्गुण भी हैं। निर्गुण होने से वे निष्क्रिय हैं; तब शिव का शिवत्व नहीं। शङ्करावतार आदि - शङ्कराचार्य **'सौन्दर्य - लहरी'** में कहते हैं कि शिव जब शक्ति-युक्त होते हैं, तभी उनका प्रभाव है, अन्यथा वे 'शव' अर्थात् निष्क्रिय हैं। 'ब्रह्म' भी निर्गुण हैं। निर्गुण की उपासना सम्भव नहीं है। अतएव शक्ति-संयुत ब्रह्म की ही उपासना करनी होती है। इसीलिए लिङ्ग-मय शिव-सहित 'योनि-पीठ' संस्थापन करने का विधान है।

श्रीभैरवी वन्दना

श्री बलराम दुबे, ७ नवलकिशोर मार्ग, लखनऊ (उ० प्र०)

कोटिन उदित रवि द्युति देखि झपि जात,
एक कर अंकुश द्वितीय शर विद्यमान।
तीजे कर अक्ष - माल पुस्तक चतुर्थ कर,
गल माँहि मुण्ड - माल वन - माल भासमान।
उन्नत उरोज अति सुन्दर त्रिनेत्रा चारु,
पङ्कज के आसन विराजमान तेजवान।
भैरवी तिहारी भक्ति - भावना में साधक को,
मिलत अपार सुख - शान्ति - पूर्ण तत्त्व-ज्ञान।।

'कौल-कल्पतरु' पं० देवीदत्त शुक्ल

असीम तेज-वन्त तू, प्रकाश-ज्योति-पुञ्ज तू—
अनन्त शक्ति-स्रोत की सुधा-मयी प्रवाहिनी !
उदीयमान सूर्य की प्रभा मुखारविन्द पे—
प्रदीप्त प्राण-ज्योति तू अदृश्य अंशु-मालिनी !
शिखाग्नि दीप्त-ज्वाल की ज्वलन्त सप्त-जीभ तू—
तुरङ्ग शक्ति सूर्य की अपूर्व शक्ति - शालिनी !
विशुद्ध तप्त-स्वर्ण-सी ढली पुनीत अग्नि में—
सु-कान्ति दिव्य दर्शनीय शोभना शुभाङ्गिनी !
तपाग्नि शान्त हो, हरो असह्य पाप-त्रास को,
खिलो प्रशान्त चाँद-सी शिखाग्नि ज्वाल-मालिनी !
समस्त षोडशी - कला लिए प्रशस्त भाल पे,
हरो हिमांशु-शेखरा समस्त ताप-हारिणी ! ।।
प्रसीद भीम - भैरवी भयङ्करी भयावनी,
निवारिणी समस्त कष्ट-क्लेश-विघ्न-हारिणी !
हरो महोग्र - रूप त्रास - मूल, शूल - ताप को,
प्रसन्न शान्त रूप दो, वरेष्ट-सिद्धि-दायिनी !।।
मुखारविन्द मन्द - मन्द हास की छटा लिए—
सदा प्रसन्न - आनना सु-मङ्गलादि-दायिनी !
प्रसिद्धि सर्वतोमुखी समुन्नतादि - दायिनी,
प्रसीद हस्त जाप-माल ज्ञान-ग्रन्थ-धारिणी !।।
त्रि-नेत्र-सूर्य-चन्द्र - अग्नि - मण्डिता विभूषिता,
अलंकृता सु - वस्त्र रक्त - रेशमी शुभाङ्गिनी !
पयोधराग्र - रञ्जिता सु-लिप्त-रक्त - चर्चिता,
प्रसीद मुण्ड-मालिनी सुबुद्धि-ज्ञान-दायिनी !।।
प्रतीक नित्य क्षीय - नाशवान सृष्टि - रूपिणी,
प्रणम्य वन्दनीय तू अनित्य - नित्य - रूपिणी !
हरो अकाल मृत्यु को, अकाल-काल-भैरवी—
चतुर्भुजा समर्थ श्री सु-यन्त्र-सिद्ध-वाहिनी ! ।।
सु-यन्त्र-सिद्ध सारथी, स-वेग हाँक यान श्री—
समस्त विघ्न लाँघती चलो प्रचण्ड डाकिनी !
करो प्रशस्त मार्ग को, सहाय सिद्ध - भैरवी,
करूँ सु-वन्दना सदा अमोघ सिद्धि-दायिनी !।।
अलंघ्य तू, अकाट्य तू, अचूक तू, अजेय तू—
सु-कर्म - क्षेत्र - सारथी सदा जयादि-दायिनी !
प्रसीद मैहरेश्वरी, प्रसीद विन्ध्य - वासिनी,
करूँ विनम्र वन्दना सु-वन्दनीय स्वामिनी ! ।।
विराट्-सूक्ष्म-सूक्ष्म-तम स्वरूप विद्यमान तू—
पराऽपरा प्रकाश अन्धकार शून्य - साक्षिणी !
अघोर - घोर साधना सदा सहाय भैरवी,
अपार भक्त-वत्सला दया-क्षमा-प्रदायिनी ! ।।

श्रीरुद्र-गीता

॥ चौपाई ॥

सुनु मुनि यह तन - मन्दिर माहीं । दुइ विधि चेतन-रूप सदा हीं
निर्विकल्प[1] आतम यक रूपा । सदा एक - रस शान्त अनूपा
यक चैतन्योन्मुख[2] वपु[3] अहई । सो वह मिला दृश्य[4] सन रहई
वास्तव मँह न भयो कछु कैसे । स्वप्न-सृष्टि पुनि जाग्रत जैसे
जिमि पावक थिर चञ्चल ज्वाला । तिमि परमातम जीव है वाला
निज सङ्कल्प - सृष्टि विस्तारी । भ्रम करि जीव भयो संसारी
यथा सिंह मृग - गण सँग आई । चारा चरत स्वभाव भुलाई
सहज रूप निज चेतै जब हीं । गज शिर चढ़ै मृगन तजि तब हीं
तथा जीव सङ्कल्प - अधीना । इन्द्रिन्ह सँग भयो जनु दीना
जिमि शिशु लखि अपनी परछाहीं । गुनि वैताल डरत मन माहीं
तिमि अपने हि कल्पित भव आसा । परि-करि कर्म लहत दुख-त्रासा
कहुँ तन तजत गहत कहुँ अहई । गिर-स्वरूप सन भटकत रहई
यक चेतन चित की सतताई । ह्वै स्पन्द[5] बहु भाव देखाई
कहुँ हरि-रूप क्षीर-निधि-वासी । कहुँ विधि ह्वै विधि-लोक-निवासी
कहुँ हर पञ्च - वदन कैलासी । कहुँ सुर-पति ह्वै स्वर्ग-विलासी
कहुँ रवि-शशि दिन-रैन प्रकाशी । कहुँ नक्षत्र उडु-गण द्युति-राशी
क्षिति-जल-अनल[6]-अनिल-नभ-रूपा । होत प्रकृति-गुण तेहि अनुरूपा[7]
बड़ विराट लघु सूक्ष्म प्रयन्ता । रूप नाम गुण होत अनन्ता
ऊर्ध्व मध्य अध भटकत रहई । कर्म शुभाशुभ कर फल लहई
जस - जस करत भावना सोई । तस - तस रूप शीघ्र वह होई
जिमि सपने होइ आपुहि आना । भोग सत्य इव दुख-सुख नाना

॥ दोहा ॥

पर - स्वरूप से सत्यता, होत भिन्न कहुँ नाहिं ।
जिमि नद-फेनु तरङ्ग बहु, सब जल ही जल आहि ॥

॥ घनाक्षरी ॥

आदि चित्ति-कला जो फुरी, सो चढ़ी जीव - रथ,
जीव जाय चढ़्यो, अहङ्कार बुद्धि पर ।
बुद्धि चढ़ी मन पर, मन चढ़्यो प्राण पर,
प्राण चढ़े इन्द्री पर, इन्द्रो देह - वृद्धि पर ।
देह चढ़ी वस्तु पर, कर्म जो करत नित्य,
विश्व - रूपी पिञ्जर में, भ्रमै कार्य-सिद्धि पर ।
ऐसे चक्र माहीं जीव, भटकै प्रमाद करि,
साक्षी 'बलदेव' निर्विकल्प, सिद्धि - निद्धि पर ।

॥ चौपाई ॥

सर्वात्मा शान्त सम - रूपा । तेहि पूजा दुइ भाँति निरूपा
इष्ट-देव कर पूजन - ध्याना । ध्यानहिं पूजन भेद न आना
जहँ-जहँ सुनौ-गुनौ कहि देखौ । तहँ - तहँ रूप आत्महिं लेखौ
सर्व - प्रकाशक जो चिद्रूपा । भीतर - बाहर एक अनूपा
सत्-चित् अनुभव भीतर जोई । अहं - रूप करिहै सिध सोई
सर्व - सार अरु सर्व अधारा । तेहि विराट वपु सुनहु अपारा

॥ दोहा ॥

एकहि देव अनन्त सोइ, सत्ता - मात्र स्वरूप ।
तेहि प्रभु कहँ चिन्तन करै, सो न परै भ्रम - कूप ॥

॥ सवैया ॥

हौं नहिं ब्रह्म न शक्ति न ईश्वर, जीव न चेतन हौं अहङ्कारा ।
हौं नहिं त्रैगुण भूत - विषय नहिं, इन्द्रिय चौदह देव प्रकारा ॥
हौं नहिं विप्र न क्षत्रिय वैश्य, न शूद्र न आश्रम योनि अपारा ।
जो हौं सो हौं कहि जात नहीं, 'बलदेव' समस्त प्रकाशक न्यारा ॥

१ निर्विकल्प = इच्छा रहित, २ चैतन्योन्मुख = चेतन के सम्मुख, ३ वपु = शरीर, ४ दृश्य = संसार, ५ स्पन्द = चलना, ६ अनल = आग, ७ अनुरूपा = उसी तरह ।

'मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र की भ्रामक प्रस्तुति' का दुष्परिणाम :

एक भुक्त-भोगी का मार्मिक पत्र !

['चण्डी' के पिछले अङ्कों में धन - लोलुप व्यवसायियों द्वारा **'मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र'** की **'भ्रामक प्रस्तुति'** के सम्बन्ध में अनेक आलोचनात्मक लेख प्रकाशित किए गए। उनका प्रभाव भी अच्छा पड़ा। लोग कुछ सावधान हो रहे हैं। पिछले अङ्क में इसी सन्दर्भ में एक **'भुक्त-भोगी'** का पत्र प्रकाशित किया गया। उसे पढ़कर एक दूसरे **'भुक्त-भोगी'** ने अपनी दुःख - गाथा लिख भेजी। उस मार्मिक पत्र को यहाँ शब्दशः प्रकाशित किया जा रहा है। इस पत्र से प्रमाणित होता है कि **'मन्त्र - तन्त्र - यन्त्र'** के नाम पर किस तरह इस देश के लोग ठगे जा रहे हैं। इस प्रकार की **'ठगी'** द्वारा यदि केवल **'आँख के अन्धे, गाँठ के पूरे'** अर्थात् धनाढ्य लोगों को ही चूना लगता, तो कोई बात नहीं थी क्योंकि उनके अपार धन में से कुछ हजार निकल भी गए, तो उनका कुछ बिगड़ता नहीं, किन्तु **'श्रद्धावान् अल्प सम्पत्तिवाले' यदि ठगे जाते हैं, तो उनका सारा जीवन ही नष्ट हो जाता है।** इसका पाप **'मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र'** के नाम पर ठगी करनेवालों को तो ले डूबेगा ही, साथ ही सारे राष्ट्र को अपूरणीय क्षति पहुँचेगी, इसमें सन्देह नहीं। अतः राष्ट्र-हितैषी सभी व्यक्तियों और संस्थाओं का यह पावन कर्तव्य है कि जैसे जुआ, मद्य-पान, दहेज, बलात्कार, साम्प्रदायिकता, जाति-वाद, देश-द्रोह आदि राष्ट्र - घातक दुष्कर्मों की रोक-थाम के लिए प्रयास किए जाते हैं, वैसे ही इस **'ठगी'** के विरुद्ध भी कार्यवाही की जाय।

भुक्त-भोगी का प्रस्तुत पत्र इसी आशय से 'चण्डी' में प्रकाशित किया जा रहा है कि **'मन्त्र - तन्त्र - यन्त्र'** के नाम पर **'ठगी'** करनेवाले महानुभाव अपने **'दुष्कर्म'** की गम्भीरता को समझें और अपने हित में नहीं, तो **'राष्ट्र-हित'** में उसका त्याग करें।

'चण्डी' के पाठकों में धर्माचार्य भी हैं, शासन के उच्चाधिकारी भी हैं, न्यायाधिकारी भी हैं, समाज और राष्ट्र के सेवक भी हैं और पत्रकार तथा साहित्यकार भी हैं—उन सबसे अनुरोध है कि इस **'मार्मिक पत्र'** को ध्यान से पढ़ें और गम्भीरता से विचार करें कि वे पवित्र **'मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र विद्या'** के नाम पर इस **'खुली लूट'** को रोकने के लिए क्या कर सकते हैं।—सं०]

'चण्डी' अङ्क ९-१० मिलते ही प्रथम दृष्टि श्री 'कुल-भूषण' द्वारा लिखित **"मन्त्र - विद्या की जन्म-भूमि भारत में 'मन्त्र - तन्त्र - यन्त्र' की भ्रामक प्रस्तुति"** लेख पर पड़ी और श्वास रोककर एक ही साँस में उसे पढ़ गया। ऐसा लगा कि घोर अन्धकार में भटके मुसाफिर को प्रकाश मिल गया हो। पर ही क्या ? मेरे जैसे हजारों अभी भी भटक रहे हैं। बहुत लोग भटकने की तैयारी में हैं।

इसमें हम लोगों का दोष भी क्या है ? मानव सदैव लोभी और स्वार्थी होता है। विशेष कर इस **'अर्थ-युग'** में तो हर कोई चामत्कारिक ढङ्ग से सिद्धि द्वारा धन-सम्पत्ति प्राप्त करना चाहता है। यही कमजोरी हम लोगों में रही और है। **'मन्त्र-तन्त्र-यन्त्र'** पत्रिका में सिर-से-पैर तक सनसनी फैला देनेवाले तिलस्मी विज्ञापनों को देखकर किसका मन नहीं डिगेगा ? **'पारद गणपति जिसके स्थापना से स्वतः आती है ऋद्धि-सिद्धि', 'यदि जीवन को इन्द्र के समान ऐश्वर्य-मय बनाना चाहते हैं, तो कीजिए इन्द्र-कृत सिद्ध सहस्र-लक्ष्मी प्रयोग'** (इन्द्र कौन नहीं बनना चाहेगा ?) **'चामत्कारिक प्रयोग—दुःख-दारिद्र-भय को समूल मिटाने में सहायक स्वर्ण-रेखा साधना प्रयोग'** आदि-आदि एक-से-एक साधना !

उक्त सभी साधनाओं के करने के बाद भी न पैसा बढ़ा, न पद बढ़ा, बल्कि कर्ज में घिरते गए। फरियाद करने पर सख्त आदेश आया कि शीघ्र ही **'सामान्य ऋण मुक्ति-दीक्षा'** ले लो, जिसका शुल्क ५१००/- रु० है। शिविर-शुल्क ६६० रु०। गुरु-नामी चादर धोती ३०० रु०। अन्य सामग्री का हाल यह है कि गुरु-देव बोल देंगे कि 'यह यन्त्र या सामग्री ६०० रु० या १००० का है, जो आपको निःशुल्क दिया जा रहा है।' उनके जाने के बाद, उनके खास आदमी आकर बोलेंगे कि 'गुरु - देव तो बोल दिए, लेकिन हमारा कर्तव्य तो यह नहीं कहता कि गुरु-देव का मुफ्त में खाएँ। अतः आधी राशि देनी होगी।' इसके बाद घर लौटने पर जबर्दस्ती तीन - तीन सौ की वी० पी० आती है, जिसमें २-४ साल पुरानी पत्रिकाओं का बण्डल रहेगा। वह भी अलग - अलग अङ्क नहीं—जून का है, तो १०-१५ जून का ही रहेगा। जुलाई का है, तो १०-१५ जुलाई का ही ! इस तरह यहाँ से वहाँ तक लूट-ही-लूट रहती है ! सभी को व्यक्त करें, तो २-४ पृष्ठ लग जायँगे।

सन् ८६ में जोधपुर जाकर दीक्षा ली। नियमानुसार ३०० रु० जमा किए। **'गौरी-गणेश'** के संक्षिप्त पूजन के पश्चात् **'गुरु - पूजन'** फिर **'गायत्री - मन्त्र'** नित्य १ माला तथा **'गुरु-मन्त्र'** (**ॐ परम-तत्त्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः**) १ माला जप करते रहने को कहा गया। दीक्षा - कार्यक्रम १५-२० मिनट में सम्पन्न होने के बाद आगामी शिविर में भाग लेने का आदेश। जुलाई में **'देहरादून-शिविर'** में भाग लेने पहुँचे। गुरु-देव नहीं आए। अतः ज्यों-के-त्यों वापसी ! उसके बाद **'जोधपुर-शिविर'** के लिए आदेश। वहाँ पहुँचने पर मात्र १५-३० शिविरार्थी होने के कारण शिविर स्थगित (तब बहुत कम ही पहुँचते थे)। जो शिविर-शुल्क ६६० रु० पटाया गया था, उसकी सामग्री दे दी गई ! फिर **'नवरात्रि-शिविर'**, ८७ के लिए आदेश। उसमें नित्य २-४ सौ रु० की कुछ-न-कुछ सामग्री दे दी जाती। इस तरह ३-४ हजार का खर्च ! लाभ न मिलने पर प्रार्थना। पुनः आने के लिए आदेश। पुनः सामग्री !

बस, मृग-तृष्णा में भटकते-भटकते ८ वर्ष गुजर गए, झाड़-फूंक भी करना नहीं सीखे ! अन्य लोगों को भी प्रेरित करते रहे, सामग्री मँगवाते रहे, किसी को भी कोई लाभ नहीं। लिखने पर वही क्रम—**'यह विश्वास का सबसे प्रभावी यन्त्र'**, 'हजारों साल बाद ऐसा मुहूर्त आया है' आदि - आदि। सोचा, कुछ न मिला, तो **'सम्मोहन - वशीकरण'** ही सिद्ध करूँ, तो विशिष्ट दीक्षा के लिए ३००० रु० शुल्क ! दम घुट गया। इसी अवधि में **'चण्डी'** में छपे लेख की चर्चा गुरु-देव से ही जुड़े एक हिन्दी-अधिकारी बन्धु ने की। वे मेरी ही प्रेरणा से ३ वर्ष पहले गुरु-देव से जुड़े थे। वे भी निराश हो किनारे लग गए हैं। ये सज्जन पूर्व से ही **'चण्डी'** के सदस्य हैं।

अब तो जीवन का अधिकांश बहुमूल्य समय गुजर गया। सारी तमन्नाएँ धरी - की - धरी रह गईं। दूसरों का भला करना तो दूर, अपना ही कुछ करने को सक्षम नहीं हूँ। नाना प्रकार के दुखी जन मेरे पास आते हैं। सुनकर दुखी होता हूँ और चाहता हूँ कि तन्त्र-मन्त्र के माध्यम से इनका दुख दूर करूँ लेकिन मैं स्वयं अधूरा रह गया ! इसका दुःख है। अन्य तान्त्रिकों के साहित्य को पढ़ता हूँ, तो वे भी एक-से-एक चमत्कारी सामग्री की महिमा से पुस्तक रँग डाले हैं। मँगा-मंगा कर किया भी, किन्तु कोई बात नहीं बनी।

आशा है, उचित मार्ग-दर्शन देने की कृपा करेंगे, जिससे शेष समय में कुछ प्राप्त कर सकूं। अब तो साधना के लिए वह ऊर्जा और उत्साह भी नहीं है।

साधनमाला

[पौष-अङ्क (जनवरी, ६४) से आगे]

(१४६)

शिव-शक्ति-पूजा की सरल विधि

शास्त्रों के अनुसार किसी 'तीर्थ-स्थान' की मिट्टी लाकर 'कुण्डलिनी'-युक्त सुन्दर 'शिव-लिङ्ग' बनाकर 'शिव-शक्ति' की पूजा करनी चाहिए। 'तीर्थ-स्थान' की मिट्टी यदि सुलभ न हो, तो 'नदी' की मिट्टी लानी चाहिए। पर्वतों से निकलनेवाली 'जल-धारा' को 'नदी' कहते हैं। यदि आस-पास 'नदी' न हो, तो क्षुद्र-स्रोतों की मिट्टी का प्रयोग करना चाहिए। पर्वतों से निकले हुए 'जल - प्रवाह' के अतिरिक्त 'जल-प्रवाहों' को 'क्षुद्र जल - प्रवाह' माना गया है। झरने की मिट्टी से 'शिव - लिङ्ग' बनाकर शिव की पूजा करने पर सम्पत्ति मिलती है। सरोवर की मिट्टी विविध सुखों को प्रदान करती है। ये सब मिट्टियाँ न मिलें, तो गायों के चरने के स्थान की मिट्टी या जिस स्थान पर जाने से चित्त प्रसन्न होता है, उस स्थान की मिट्टी का उपयोग करना चाहिए। मिट्टी प्रत्येक स्थिति में स्वच्छ और बालू - रहित होनी चाहिए।

उक्त प्रकार लाई हुई शुद्ध मिट्टी से **'कुण्डलिनी-सहित शिव-लिङ्ग'** बनाए। कुण्डलिनी देवी, परमेश्वरी रूप होती हैं, अतः ऐसे 'शिव-लिङ्ग' की पूजा से 'शिव' और 'शक्ति' दोनों की पूजा हो जाती है। 'शिव - लिङ्ग' बनाने के पूर्व मिट्टी को **अनुलोम - विलोमात्मक मातृका - मन्त्र** (अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः, कं खं गं घं ····हं ळं क्षं ळं हं·····घं गं खं कं, अः अं औं ओं ऐं एं ॡं ऌं ॠं ऋं ऊं उं ईं इं आं अं) से दस बार अभिमन्त्रित करे अर्थात् मिट्टी को स्पर्श करते हुए दस बार उक्त मातृका-मन्त्र का जप करे। फिर मिट्टी की प्रार्थना करे—

सर्व-शक्ति-मये देवि ! मृत्तिके, त्रिदशेश्वरि ! निर्माय पार्थिव - लिङ्गं शिव - पूजां करोम्यहम् ।
त्वयि कामश्च धर्मश्च, तत् - क्रमेऽर्थमपीश्वरि ! चतुर्वर्ग - प्रदे देवि, नाना - रत्न - विभूषिते !
त्वां विना परेशानि ! कुतो मोक्षः, कुतः सुखं ? अर्थः कामश्च देवेशि ! त्वां विना नहि जायते ।।

अर्थात्—हे सर्व-शक्ति-मयी देवि ! हे मृत्तिके ! हे देवों की ईश्वरि ! मैं पार्थिव शिव - लिङ्ग बनाकर भगवान् शिव की पूजा करता हूँ । आप में 'धर्म' और 'काम' निहित हैं और हे ईश्वरि ! उस क्रम से 'अर्थ' भी । विविध रत्नों से सुशोभित हे देवि ! आप चतुर्वर्ग अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को प्रदान करती हैं । आपके बिना हे परमेश्वरि ! 'मोक्ष' कहाँ और सुख कहाँ ? अर्थात् आपकी कृपा के बिना न सुख मिल पाता है और न मोक्ष । हे देवेश्वरि ! 'अर्थ' और 'काम' की प्राप्ति भी बिना आपकी कृपा के सम्भव नहीं होती ।

पुनः **'ॐ ह्रीं मृत्तिके, दुष्कृति-हरे ! ह्रीं ॐ'** अथवा **'ॐ हराय नमः'** यह मन्त्र पढ़ते हुए अभिमन्त्रित मिट्टी को हाथ में ले और **'अं आं इं ईं उं ऊं ··· हं ळं क्षं ॐ महेश्वराय नमः'** से उसे नमस्कार करे ।

फिर **'मातृका-मन्त्र'** (अं आं ····· हं ळं क्षं) उच्चारण कर 'शिव-लिङ्ग' बनाते हुए कहे—**'शूल-पाणे ! सु-प्रतिष्ठितो भव ।'** अन्त में पुनः **'मातृका - मन्त्र'** का उच्चारण करे । तब **'हां महेश्वराय नमः, हीं महेश्वराय नमः, हूं महेश्वराय नमः, हैं महेश्वराय नमः, हौं महेश्वराय नमः, हः महेश्वराय नमः'** से षडङ्ग-न्यास कर 'ध्यान' करे । यथा—

ॐ ध्याये नित्यं महेशं रजत-गिरि-निभं चारु - चन्द्रावतंसम्,
रत्नाकल्पोज्ज्वलाङ्गं परशु-मृग - वराभीति - हस्तं प्रसन्नम् ।
पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममर - गणैर्व्याघ्र - कृत्ति वसानम्,
विश्वाद्यं विश्व बीजं निखिल-भय-हरं पञ्च-वक्त्रं त्रि-नेत्रम् ।।

अर्थात्—मैं विश्व के उत्पन्न करनेवाले, विश्व के आदि, पञ्च-मुख एवं त्रि-नेत्र महेश्वर का ध्यान सर्वदा करता हूँ, जो सभी प्रकार के भय को दूर कर देते हैं । वे चाँदी के पर्वत के समान उज्ज्वल-वर्णवाले हैं । सुन्दर चन्द्र-कला उनके मस्तक पर शोभायमान है । सभी अङ्ग रत्नों से प्रकाशित हैं । अपने चार कर-कमलों में परशु, मृग, वर और अभय मुद्रा धारण किए हैं । व्याघ्र-चर्म पहने हैं और प्रसन्न मुद्रा में कमल के ऊपर विराजमान हैं । उनके चारों ओर खड़े हुए देवता उनकी स्तुति कर रहे हैं ।

इस प्रकार ध्यान कर अपने शिर पर पुष्प रखकर भगवान् शिव की मानस-पूजा करे । मानस-पूजा करने के बाद पुनः ध्यान कर 'शिव-लिङ्ग' के शिर पर पुष्प रखकर कहे—

'पिनाक-धृक् ! इहावह, इहावह । इह तिष्ठ, इह तिष्ठ । इह सन्निधेहि, इह सन्निधेहि । इह सन्निरुद्धस्व, इह सन्निरुद्धस्व । इह सम्मुखो भव, इह सम्मुखो भव । यावत् पूजां करोम्यहम्, तावत् स्थिरो भव । एतत् पाद्यं नमः शिवाय ।' इत्यादि । इस प्रकार सभी उपचार नमस्कार-सहित प्रदान करे ।

उपचार-पूर्वक पूजन करने के बाद स्तोत्र-पाठ के बाद पूजा का समर्पण करे—

'ॐ गुह्याति-गुह्य गोप्ता त्वं, गृहाणास्मत् कृतं जपम् । सिद्धिर्भवतु मे देव ! त्वत्-प्रसादान्महेश्वर !

अन्त में समर्पण की भावना के साथ अष्टाङ्ग प्रणाम करे और संहार - मुद्रा द्वारा **'महा-देव ! क्षमस्व'** कहकर पूजन का विसर्जन करे ।

(१४७)

नर्मदा अभिलाषाष्टक स्तोत्र

'नर्मदा' नदी के तट पर 'नर्मपुर' नामक नगर में 'शाण्डिल्य' -गोत्र के तपस्वी मुनि विश्वानर निवास करते थे। वे प्रति - दिन भगवान् शिव की पूजा - अर्चना कर केवल जल एवं फलाहार ही करते थे। उनकी धर्म-परायणा पत्नी श्रीमती शुचिस्मती अपने पति को ही परमेश्वर मानकर उन्हीं की सेवा में लगी रहती थीं। एक दिन पुत्र - सुख की अभिलाषा से उन्होंने अपने पति से हाथ जोड़कर निवेदन किया कि—हे देवेश्वर ! गृहस्थ के लिए पुत्र-सुख आवश्यक है क्योंकि मरणोपरान्त **'कपाल-क्रिया'** और **'पिण्ड - दान'** पुत्र द्वारा ही सम्भव है, जिनके बिना मृत प्राणी को सद्-गति नहीं प्राप्त होती। अतः आपसे वर पाने की मैं अधिकारिणी हूँ। कृपया मुझे **'शिव - तुल्य'** पुत्र का सुख पाने का वर - दान प्रदान करें।

पत्नी की बात सुनकर मुनि विश्वानर चिन्तित हो उठे क्योंकि **'शिव - तुल्य'** पुत्र पाना बिना प्रभु शिव के स्वयं अवतरित हुए सम्भव नहीं था। पत्नी की प्रार्थना न्यायोचित थी, अतः उसकी पूर्ति की अभिलाषा से पत्नी से अनुमति लेकर भगवान् शिव को प्रसन्न करने के लिए तप हेतु घर से निकल पड़े।

अभीष्ट स्थान पर पहुँच कर मुनि विश्वानर ने वीरेश्वर लिङ्ग की त्रिकाल-उपासना प्रारम्भ कर दी। साथ ही **'अभिलाषाऽष्टक'** नामक स्तोत्र से प्रति-दिन उनकी वन्दना करने लगे। यथा—

एकं ब्रह्मैवाद्वितीयं समस्तं, सत्यं सत्यं नेह नानास्ति किञ्चित्।
एको रुद्रो न द्वितीयोऽवतस्थे, तस्मादेकं त्वां प्रपद्ये महेशम् ॥१

हे भगवन् ! आप ही एक-मात्र अद्वितीय ब्रह्म हैं। यह सारा जगत् आपका ही स्वरूप है। यहाँ अनेक कुछ भी नहीं है। यह बिल्कुल सत्य है कि एक-मात्र रुद्र के अतिरिक्त दूसरे किसी की सत्ता नहीं है। इसलिए मैं एक-मात्र आप महेश की शरण ग्रहण करता हूँ ॥१

कर्त्ता हर्त्ता त्वं हि सर्वस्य शम्भो ! नाना-रूपेष्वेक-रूपोऽप्यरूपः।
यद्-वत् प्रत्यग्-धर्म एकोऽप्यनेकस्तस्मान्नान्यं त्वां रुद्रेशं प्रपद्ये ॥२

हे शम्भो ! आप ही सबके कर्त्ता - हर्त्ता हैं। जैसे आत्म - धर्म एक होते हुए भी अनेक रूप से दीखता है, वैसे ही आप भी एक-रूप होकर भी विविध रूपों में व्याप्त हैं। फिर भी आप रूप-रहित हैं। आप ईश्वर के अतिरिक्त मैं किसी दूसरे की शरण नहीं ले सकता ॥२

रज्जौ सर्पः शुक्तिकायां च रौप्यं, नरैः पुरस्तन्मृगाख्ये मरीचौ।
यद्-वत् तद्-वद् विश्वेशेष प्रपञ्चो, यस्मिन् ज्ञाते तं प्रपद्ये महेशम् ॥३

जैसे रस्सी में साँप, सीपी में चाँदी और मृग-मरीचिका में जल-प्रवाह का बोध होना मिथ्या है, वैसे ही जिसे जान लेने पर यह विश्व-प्रपञ्च मिथ्या ज्ञात होता है, उन्हीं महेश्वर की मैं शरण लेता हूँ ॥३

तोये शैत्यं दाहकत्वं च वह्नौ, तापो भानौ शीत - भानौ प्रसादः ।
पुष्पे गन्धो दुग्ध-मध्येऽपि सर्पिर्यत् तच्छम्भो ! त्वं ततस्त्वां प्रपद्ये ।।४

हे शम्भो ! जल में शीतलता, अग्नि में दाहकता, सूर्य में गर्मी, चन्द्रमा में आह्लाद-कारिता, पुष्प में गन्ध और दुग्ध में घी की विद्यमानता आपका ही स्वरूप है । अतः मैं आपकी शरण हूँ ।।४

शब्दं ग्रहास्यश्रवास्त्वं हि जिघ्रस्यघ्राणस्त्वं व्यङ्घ्रिरायासि दूरात् ।
व्यक्षः पश्येस्त्वं रसज्ञोऽप्यजिह्वः, कस्त्वां सम्यग् वेत्यतस्त्वां प्रपद्ये ।।५

आप कान-रहित होकर भी शब्द सुन लेते हैं, नाक-विहीन होकर सूँघ लेते हैं, पैर न होने पर भी दूर से चले आते हैं, नेत्र - हीन होकर भी सब कुछ देख लेते हैं और जिह्वा - हीन होकर भी सभी रसों का स्वाद जान लेते हैं । ऐसे विलक्षण आपको सम्मक् रूप से कौन जान सकता है ! अतः मैं आपकी शरण लेता हूँ ।।५

नो वेदस्त्वामीश ! साक्षाद्धि वेद, नो वा विष्णुनो विधाताऽखिलस्य ।
नो योगीन्द्रा नेन्द्र-मुख्याश्च देवा, भक्तो वेद त्वामतस्त्वां प्रपद्ये ।।६

हे ईश ! आपके रहस्य को न तो साक्षात् वेद जानते हैं, न विष्णु, न अखिल विश्व के विधाता ब्रह्मा, न योगीन्द्र और न इन्द्र आदि प्रधान देवताओं को ही इसका पता है, परन्तु आपका भक्त उसे जान लेता है । अतः मैं आपकी शरण लेता हूँ ।।६

नो ते गोत्रं वेश ! जन्मापि नाख्या, नो वा रूपं नैव शीलं न देशः ।
इत्थम्भूतोऽपीश्वरत्वं त्रैलोक्यः, सर्वान् कामान् पूरये तद् भजे त्वाम् ।।७

हे ईश ! न तो आपका कोई गोत्र है, न जन्म है, न नाम है, न रूप है, न शील है और न देश है ! ऐसे होने पर भी आप तीनों लोकों के अधीश्वर और सभी कामनाओं को पूर्ण करनेवाले हैं । अतः मैं आपकी वन्दना करता हूँ ।।७

त्वत्तः सर्वं त्वं हि सर्वं स्मरारे ! त्वं गौरीशस्त्वं च नग्नोऽति-शान्त !
त्वं वै वृद्धस्त्वं च बालस्तत्त्वं यत् किं नास्यतस्त्वां नतोऽहम् ।।८

हे काम-शत्रो ! आप सर्व-स्वरूप हैं । यह सारा विश्व - प्रपञ्च आपसे ही प्रकट हुआ है । आप गौरी के प्राण-नाथ, दिगम्बर और परम शान्त हैं । बाल, युवा और वृद्ध-रूप में आप ही वर्तमान हैं । ऐसी कौन-सी वस्तु है, जिसमें आप व्याप्त न हों । अतः मैं आपके प्रति नत-मस्तक हूँ ।।८

इस **'अभिलाषाऽष्टक स्तोत्र'** के भाव - पूर्ण नियमित पाठ से भगवान् शङ्कर प्रसन्न हो उठे और उन्होंने विश्वानर मुनि को प्रत्यक्ष दर्शन देकर उन्हें यह वरदान दिया कि—'जाओ ! मैं स्वयं तुम्हारे घर में पुत्र-रूप से जन्म लूँगा और मेरा नाम 'ग्रह-पति' होगा । साथ ही, तुम्हारे द्वारा पठित स्तोत्र का पाठ जो भी भक्ति-पूर्वक प्रति-दिन तीन बार नियमित रूप से करेगा, उसकी सभी अभिलाषाएँ पूर्ण होंगी । पुत्र - पौत्र - धन सभी की प्राप्ति होगी । शान्ति मिलेगी, विघ्नों का नाश होगा, स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ति होगी ।'

(१४८)

श्रीशिवाष्टोत्तर-शत-दिव्य-नामामृत-स्तोत्रम्

॥ पूर्व-पीठिका—श्रीपार्वत्युवाच ॥

शरीरार्धमहं शम्भोर्येन प्राप्स्यामि केशव ! तदिदानीं समाचक्ष्व, स्तोत्रं शीघ्र-फल-प्रदम् ॥

॥ श्रीनारायण उवाच ॥

अस्ति गुह्य-तमं गौरि ! नाम्नामष्टोत्तरं शतम् । शम्भोरहं प्रवक्ष्यामि, पठतां शीघ्र-कामदम् ॥

॥ मूल-पाठ ॥

विनियोग—ॐ अस्य श्रीशिवाष्टोत्तर-शत-दिव्य-नामामृत-स्तोत्र - माला - मन्त्रस्य श्रीनारायण ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीसदा-शिव-परमात्मा देवता, श्रीसदा-शिव-प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीनारायण - ऋषये नमः शिरसि, अनुष्टुप्-छन्दसे नमः मुखे, श्रीसदा-शिव - परमात्मा - देवतायै नमः हृदि, श्रीसदा - शिव - प्रीत्यर्थे जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

ध्यान— धवल - पुष्पमिन्दोर्मण्डले सन्निविष्टम्,
भुजग-वलय-हारे भस्म-दिग्धाङ्गमीशम् ।
हरिण-परशु-पाणिं चारु-चन्द्रार्ध-मौलिम्,
हृदय-कमल-मध्ये सन्ततं चिन्तयामि ॥

॥ मूल-स्तोत्र ॥

शिवो महेश्वरः शम्भुः, पिनाकी शशि-शेखरः । वामदेवो विरूपाक्षः, कपर्दी नील-लोहितः ॥
शङ्करः शूलपाणिश्च, खट्वाङ्गी विष्णुवल्लभः, शिवि-विष्टोऽम्बिकानाथः, श्रीकंठो भक्तवत्सलः।
भवः शर्वः त्रिलोकेशः, शिति-कण्ठः शिवा-प्रियः । उग्रः कपालिः कामारिरन्धकासुर-सूदनः ॥
गङ्गाधरो ललाटाक्षः, काल-कालः कृपानिधिः । भीमः परशु-हस्तश्च, मृग-पाणिः जटा-धरः ॥
कैलाश-वासी कवची, कठोरः त्रिपुरान्तकः । वृषाङ्को वृषभारूढो, भस्मोद्धूलित-विग्रहः ॥
साम-प्रियः स्वर-मयस्त्रयी-मूर्तिरनीश्वरः । सर्वज्ञः परमात्मा च, सोम-सूर्याग्नि-लोचनः ॥
हविर्यज्ञ-मयः सोमः, पञ्च-वक्त्रः सदा-शिवः । विश्वेश्वरो वीर-भद्रो, गण-नाथः प्रजा-पतिः ॥
हिरण्य-रेता दुर्धर्षो, गिरीशो गौरीशोऽनघः । भुजङ्ग-भूषणो भर्गो, गिरि-धन्वा गिरि-प्रियः ॥
कृत्ति-वासा पुरारातिर्भगवान् प्रमथाधिपः । मृत्युञ्जयः सूक्ष्म-तनुः, जगद्-व्यापी जगद्-गुरुः ॥
व्योम-केशो महा-सेनः, जनकः चारु-विक्रमः । रुद्रो भूत-पतिः स्थाणुरहिर्बुध्न्यो दिगम्बरः ॥

अष्ट-मूर्तिरनेकात्मा, सात्त्विकः शुद्ध-विग्रहः । शाश्वतः खण्ड-परशुः, रज-पाश-विमोचकः ।।
मृडः पशु-पतिर्देवो, महा-देवोऽव्ययः प्रभुः । पुष्प-दन्तमिदं व्यक्तं, सहस्राक्षः सहस्र-पात् ।।
अपवर्ग-परोऽनन्त-तारकः परमेश्वरः ।

।। फल-श्रुति ।।

एतदष्टोत्तर-शत-नामाम्नायेन सम्मितम् । विष्णुनां कथितं पूर्वं, पार्वत्या इष्ट - सिद्धये ।।
शङ्करस्य प्रिया गौरी, जपित्वा त्रैकालमन्वहम् । नोदिता पद्म-नाभेन, वर्षमेकं प्रयत्नतः ।।
अवाप सा शरीरार्धं, प्रसादात् शूल-धारिणः । यस्त्रि-संध्यं पठेच्छंभोः, नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ।।
शत-रुद्रिः त्रिरावृत्या, यत् फलं प्राप्यते नरैः । तत् फलं प्राप्नुयादेतदेकवृत्त्या जपेन्नरः ।।
बिल्व-पत्रैः प्रशस्तैर्वा, पुष्पैश्च तुलसी-दलैः । तिलाक्षतैर्यजेत् यस्तु, जीवन्मुक्तो न संशयः ।।
नाम्नामेषां पशु - पतेरेकमेवापवर्गदम् । अन्येषां चावशिष्टानां, फलं वक्तुं न शक्यते ।।

।। श्रीशिव-रहस्ये गौरी-नारायण-सम्वादे शिवाष्टोत्तर-शत-दिव्य-नामामृत-स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।।

(१४९)

श्रीअन्नपूर्णा-विधान

।। पूर्व-पीठिका—श्रीपार्वत्युवाच ।।

महा-देव ! नमस्तुभ्यं, विरूपाक्षाय ते नमः । अन्नदा-हृदयाख्यं च, प्रयोगं वद सुव्रत ! ।।

।। श्रीशिव उवाच ।।

अन्नदायाश्च हृदयं, गुप्तात् गुप्त-तरम् । एतत् श्रवण-मात्रेण, मम सिद्धिमवाप्नुयात् ।।
न ध्यानं न च होमं च, न जपं न च तर्पणम् । भक्त्या स्मरण-मात्रेण, तस्य सिद्धिः करे गता ।।
न चाभिषेक-हीनस्य क्रम-मन्त्र-रहितस्य च । सिद्धिर्न प्राप्यते लोके, गुरु-हीनस्य शाश्वतीम् ।।
पार्वत्या हृदयाख्यं च, ब्रह्मादीनां सुदुर्लभम् । सकृदुच्चारणादेव, वाञ्छितं फलमाप्नुयात् ।।
दरिद्रो भवति श्रीमान्, मूको वाचस्पतिर्भवेत् । पंगुर्लोकोत्तर-गतिं, प्राप्नुयात् नात्र संशयः ।।
अन्नदो धनदो देवि ! साक्षात् वैश्रवणोपमः । जायते पठनाद् देवि ! नरो निश्चल-मानसः ।।
सत्त्ववान् क्षय-रोगी च, कुलजो निन्दितोऽपि वा । ब्रह्मापि निधनं याति, साधको द्वेष-कारणात् ।।
वक्ष्येऽहं मम सर्वस्वं, शृणु साऽवहिता भव । प्रणवं पाश-बीजं च, माया चांकुशमेव वा ।।
पुनर्मायां श्रियं कामं, अन्नदाऽन्नपूर्णा तथा । माहेश्वरी पदं चैव, संबोधनैव पार्वति ! ।।
आवेशय-पद-द्वन्द्वं, चिरं तिष्ठ-द्वयं ततः । वर्म फट् वह्नि-जायान्तो, मन्त्रः त्रैलोक्य-दुर्लभः ।।

नव-वेदाक्षरो मन्त्रो, सर्व-कार्यार्थ-सिद्धिदः । ऋषि शिवोऽथ गायत्री, छन्दः श्रीभुवनेश्वरी ।।
अन्नदा देवता प्रोक्ता, चान्न-देवी प्रपूरिता । दानोत्सुका नृत्य-राजे, मन्दास्या भूषणोज्ज्वला ।।
ध्यायेत् तां चारु-वदनां, श्री-भूमिभ्यां निषेवितां । लक्षावर्तन-मात्रेण, खेचरो जायते नरः ।।
सम्विदा सर्व-मोदाख्यो, सिन्दूर-तिलक-प्रियः । भस्म-त्रिपुण्ड्र-संयुक्तो, वनिता-पूजन-प्रियः ।।
पञ्च-कृत्य-पुरो मंत्री, ध्यायेत् श्रीमन्नदां तु यः । सः शिवो वा शिवः सोऽपि, पौरुषे पुरुषो भवेत् ।
वन्ध्यायां मार्जयेदम्भे, मनुना चैव साधकः । वन्ध्या पुत्रवती भूयात्, देवी-भक्त-कृपा-वशात् ।।
अन्नदा हृदयेनैवं, त्रिकाल सदा-मन्त्रितम् । पयः पिबति सा वन्ध्या, सैव पुत्रवती भवेत् ।।
कृत्या-रोगादि-संयुक्तो, मनुना मन्त्रितेन च । त्रिंशदावर्तनेनैव, रोगी मुच्येत् सङ्कटात् ।।
नित्यमष्टोत्तर-शतं यो जपेत् हृदयोत्तमम् । चिन्तितं च भवेत्तस्य, नात्र कार्या विचारणा ।।
महा-मोक्ष-प्रदा देवि ! ब्रह्मादीनां च भोगदा । योगदा योगिनां नित्यं, सा मे प्रियतरा शिवा ।।
भव-दुःखौघ-नाशाय, भव-तोषण-हेतवे । अन्नदा - रूपमासाद्य, मम वामाङ्गता गताः ।।
ये नमस्यन्ति प्रत्यूषे, पार्वति ! मम वल्लभे ! तेषां दुःखं न जायेत, दुःखानां तु भञ्जकरः ।।
संसारार्णव-सेतुत्वात्, दुःखौघ-शमनात् शिवे ! अन्न-पूर्णेति ते नाम, लोकेऽस्मिन् संप्रतिष्ठितम् ।।
चतुर्वर्णात्मिके देवि ! चतुर्वेदे प्रतिष्ठिता । तस्मात् धारय सर्वस्वं, जप नित्यं सदाऽऽदरात् ।।

।। मूल-पाठ ।।

विनियोग—ॐ अस्य श्रीनव - वेदाक्षर - मन्त्रस्य शिवो ऋषिः, गायत्री छन्दः, अन्नदा अन्न - पूर्णा देवता, अन्न-दर्वी-प्रपूरये सर्व-कामार्थ-सिध्यर्थे अन्न-पूर्णा-प्रीत्यर्थे च जपे विनियोगः ।

ऋष्यादि-न्यास—श्रीशिव-ऋषये नमः शिरसि, गायत्री-छन्दसे नमः मुखे, अन्नदा-अन्न-पूर्णा-देवतायै नमः हृदि, अन्न-दर्वी-प्रपूरये, सर्व-कामार्थ-सिध्यर्थे अन्न-पूर्णा-प्रीत्यर्थे च जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे ।

ध्यान—ॐ तप्त-स्वर्ण-निभां शशाङ्क-मुकुटां रत्न-प्रभा-भास्वराम्,
नाना-वस्त्र-विराजतां त्रि-नयनां भूमी-रमाभ्यां युताम् ।
दर्वी-हाटक-भाजनं च दधतीं लम्ब्योच्च-पीन - स्तनीम्,
नृत्यन्तं शिवमालोकयन् मुदिता ध्यायेऽन्न-पूर्णेश्वरीम् ।।

मन्त्र—ॐ आं ह्रीं क्रों ह्रीं श्रीं क्लीं अन्नदे अन्न-पूर्णे ! माहेश्वरि ! आवेशय आवेशय चिरं तिष्ठ तिष्ठ हुं फट् स्वाहा ।

पं० कृष्णानन्द मिश्र वैद्य, ककरा, दुबावल, प्रयाग

विधान-वर्णन : 'पूर्व-पीठिका' के अन्तर्गत उक्त मन्त्र की महिमा एवं प्रयोग - विधि का वर्णन है। 'मूल-पाठ' के अन्तर्गत **'विनियोग, ऋष्यादि-न्यास, ध्यान, मानस-पूजन'** और **'जप'** का उल्लेख है, जो इस विधान के मुख्य कर्म हैं। यद्यपि महिमा-वर्णन में कहा है कि ध्यान, होम, जप, तर्पण आदि की कोई आवश्यकता नहीं है, केवल स्मरण करने से ही सिद्धि मिल जाती है, किन्तु यह बात पूर्णाभिषिक्त सिद्ध साधकों के लिए है, जिन्हें पूर्णाभिषेक द्वारा सभी 'क्रम - मन्त्र' प्राप्त हैं। वे अवश्य केवल स्मरण करके भगवती अन्न-पूर्णा की कृपा प्राप्त कर सकते हैं। जो अभिषेक-हीन हैं, क्रम-मन्त्र से रहित हैं, गुरु-हीन हैं—वे उक्त मन्त्र की साधना द्वारा अभीष्ट फल नहीं प्राप्त कर सकते।

गुरु-देव से दीक्षा - प्राप्त व्यक्ति ही उक्त **'मन्त्र'** के प्रयोग द्वारा कहे हुए फल पा सकता है। दरिद्र धनवान हो जाता है, गूँगा विद्वान् बन जाता है और लँगड़ा विश्व भर का भ्रमण कर लेता है। स्थिर-मन से जप करनेवाला व्यक्ति कुबेर के समान अन्न और धन का दाता हो जाता है। इस मन्त्र के साधक से जो द्वेष करता है, उसका नाश हो जाता है। मन्त्रोद्धार के अनुसार ३६ अक्षर का मन्त्र है, जो ऊपर दिया है किन्तु एक मत से 'प्रवेशय' के बाद **'ॐ आं ह्रीं क्रों मम हृदये प्रवेशय प्रवेशय'** पद और जोड़ लेते हैं। जैसा गुरु-देव का निर्देश हो, वैसा ही करना चाहिए।

(१५०)

अन्न-पूर्णा-साधना

किसी भी **'मन्त्र'** की साधना के दो रूप होते हैं—१ **अन्तर्यजन,** २ **बहिर्यजन** अर्थात् एक मानसिक पूजनादि और दूसरा बाह्य-पूजनादि। आवश्यक दोनों हैं, किन्तु समयाभाव में गुरु-देव की अनुमति से केवल **'मानस-पूजनादि'** वाले संक्षिप्त विधान से भी साधक उपासना कर लाभ उठा सकते हैं।

संक्षिप्त विधान

१ विनियोग—**ॐ अस्य अन्न-पूर्णेश्वरी-मन्त्रस्य श्रीबृहिण ऋषिः, कृतिः छन्दः, अन्न-पूर्णेश्वरी देवता, हुं बीजं, फट् शक्तिः, स्वाहा कीलकं, ममाखिल-सिद्धयर्थे जपे विनियोगः।**

२ ऋष्यादि-न्यास—**श्रीबृहिण-ऋषये नमः शिरसि। कृतिश्छन्दसे नमः मुखे। अन्न - पूर्णेश्वरी-देवतायै नमः हृदि। ह्रीं बीजाय नमः गुह्ये। फट्-शक्तये नमः नाभौ। स्वाहा-कीलकाय नमः पादयोः। ममाखिल-सिद्धयर्थे जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।**

३ षडङ्ग-न्यास	कर-न्यास	अङ्ग-न्यास
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
नमः	तर्जनीभ्यां नमः	शिरसे स्वाहा
भगवति	मध्यमाभ्यां नमः	शिखायै वषट्
माहेश्वरि	अनामिकाभ्यां नमः	कवचाय हुम्
अन्न-पूर्णे	कनिष्ठिकाभ्यां नमः	नेत्र-त्रयाय वौषट्
स्वाहा	करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः	अस्त्राय फट्

४ ध्यान—तप्त-स्वर्ण-निभा शशाङ्क - मुकुटा रत्न-प्रभा-भासुरा ।
नाना-रत्न-विराजिता त्रि-नयना भूमी-रमाभ्यां युता ।।
दर्वी - हाटक - भाजनं च दधती रम्योच्च-पीन-स्तनी ।
नृत्यन्तं शिवमाकलय्य मुदिता ध्येयाऽन्न - पूर्णेश्वरी ।।

अर्थात् अग्नि में तपाए हुए लाल सुवर्ण के तुल्य कान्तिवाली, चन्द्रमा के समान स्वच्छ मुकुट-धारिणी, रत्नों की निर्मल कान्ति के समान शुक्ल-वर्णा, अनेक प्रकार के रत्न एवं रत्न-जटित आभूषणों से सुशोभिता, तीन नेत्रोंवाली, अपने अनन्य भक्तों के लिए भूमि और लक्ष्मी देने के लिए तत्परा, दाहिने हाथ में दर्वी (पली) और वाम हाथ में स्वर्ण का पात्र, सुन्दर ऊँचे स्तनोंवाली और नृत्य करते हुए महा-देव जी को देखकर आनन्दिता भगवती अन्न-पूर्णा का ध्यान करना चाहिए ।

५ मन्त्रोद्धार—**वेदादिर्गिरिजा पद्मा मन्मथो हृदयं, भगवति माहेश्वरि प्रान्तेऽन्नपूर्णे दहनाङ्गना । प्रोक्ता विंशति - वर्णोऽयं विद्या - स्याद् द्रुहिणो मुनिः ।**

२० अक्षरों का स्पष्ट मन्त्र—**ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं नमः भगवति, माहेश्वरि, अन्न-पूर्णे ! स्वाहा**

६ विधि—उक्त मन्त्र का एक लाख जप और दश हजार होम करने से सिद्धि होती है । हविष्यान्न में घी मिलाकर उससे हवन करना चाहिए । ध्यान करने के बाद भगवती अन्न - पूर्णा का मानसोपचारों के पूजन करने के बाद ही जप करना चाहिए । यदि समय तथा साधन हों, तो **'मानस पूजन'** के बाद **'श्रीअन्न-पूर्णा'** के **'पूजन-यन्त्र'** में विधि-पूर्वक उनका आवाहनादि कर बाह्य उपचारों से **'आवरण देवताओं सहित'** उनका 'बाह्य पूजन' भी करना चाहिए । उसके बाद 'मन्त्र - जप' कर **'जप-फल'** को सविधि समर्पित कर होमादि कर्म करने चाहिए । यही पूरा विस्तृत विधान है । यन्त्रोद्धार इस प्रकार है—

त्रिकोण-वेद-पत्राष्ट-पत्र-षोडश-पत्रके । भूपुरेण युते यन्त्रे, प्रदद्यन्मायया ऽऽसनम् ।।

अर्थात् मध्य में त्रिकोण, उसके चारों ओर चार दलोंवाला कमल, उस चतुर्दल कमल के चारों ओर अष्ट-दल कमल, फिर षोडश-दल कमल । अन्त में भूपुर । ऐसा **'यन्त्र'** बनाकर उसके ऊपर माया-बीज (ह्रीं) का उच्चारण कर अन्न-पूर्णा को पुष्प-रूप आसन दे ।

उक्त **'अन्न-पूर्णा-यन्त्र'** के मध्यस्थ त्रिकोण में आग्नेय-कोण से क्रमशः तीनों कोणों में १ शिव, २ वाराह, ३ माधव का पूजन उनके मन्त्रों से करे । तीनों के मन्त्र निम्न प्रकार हैं—

१ शिव-मन्त्रोद्धार—**प्रणवो मनु-चन्द्राढ्यं, गगनं हृदयं शिवा । मारुतः शिव-मन्त्रोऽयं, सप्तार्णः शिव-पूजने ।**

७ अक्षरों का स्पष्ट मन्त्र—**ॐ हौं नमः शिवाय ।**

२ वाराह - मन्त्रोद्धार—**तारं नमो भगवते, वाराहार्धीश - युग् - वसुः । पाप भूर्भुवर्जलं सर्गि, स्वः - शूरः - कामिकाचये । भूपतित्वं च मे देहि, ददापय शुचि - प्रिया । त्रयस्त्रिंशद्-वर्ण-मन्त्रः, प्रोक्तो वाराह-पूजने ।।**

३३ अक्षरों का स्पष्ट मन्त्र—**ॐ नमो भगवते वराह-रूपाय भूर्भुवः स्व-पतये भू-पतित्वं मे देहि ददापय स्वाहा ।** ('मेरु-तन्त्र' के अनुसार मन्त्रोद्धार भिन्न है और मन्त्र में **'स्व - पतये'** के स्थान में **'सुवः पतये'** तथा **'प्रदापय'** के स्थान पर **'दापय'** है । देखें **'मन्त्र-कोष'**, पृष्ठ ३६) ।

३ माधव-मन्त्रोद्धार—**प्रणवो हृदयं नारायणाय वसु - वर्णकः । नारायणार्चने मन्त्रः, षडङ्गानि ततोऽर्चयेत् ।**

८ अक्षरों का स्पष्ट मन्त्र—**ॐ नमो नारायणाय ।**

उक्त तीनों मन्त्रों द्वारा **'मध्य त्रिकोण'** के तीनों कोणों में पूजन करने के बाद **'त्रिकोण'** के **'विन्दु'** में विराजमाना **भगवती अन्न - पूर्णा** की दाहनी ओर **लक्ष्मी** का और बाँईं ओर **भूमि** का पूजन निम्न मन्त्रों से करे—

[लक्ष्मी और भूमि के पूजन के पूर्व **'विन्दु'** में **'अङ्ग - न्यास'** के मन्त्रों से भगवती अन्न-पूर्णा का षडङ्ग-पूजन करे ।]

१ लक्ष्मी-पूजन-मन्त्र—**श्रीं अन्नं महान्नं मे देह्यन्नाधिपतये ममान्नं प्रदापय स्वाहा श्रीं ।**

२ भूमि-पूजन-मन्त्र—**ग्लौं अन्नं महान्नं मे देह्यन्नाधिपतये ममान्नं प्रदापय स्वाहा ग्लौं ।**

इसके बाद मध्य त्रिकोण के बाहर चतुर्दल-कमल के चारों ओर दलों में निम्न मन्त्रों से चार शक्तियों की पूजा करे—१ **ॐ परायै नमः**, २ **ह्रीं भुवनेश्वर्यै नमः**, ३ **श्रीं कमलायै नमः**, ४ **क्लीं शुभगायै नमः ।**

तदनन्तर अष्ट-दल कमल के आठ दलों में निम्न आठ मन्त्रों से अष्ट-मातृकाओं की पूजा करे—**१ आं ब्राह्म्यै नमः । २ ईं माहेश्वर्यै नमः । ३ ऊं कौमार्यै नमः । ४ ॠं वैष्णव्यै नमः । ५ ऌं वाराह्यै नमः । ६ ऐं माहेन्द्र्यै नमः । ७ औं चामुण्डायै नमः । ८ अः महा-लक्ष्म्यै नमः ।**

इसके बाद षोडश - दल कमल में निम्न मन्त्रों से १६ शक्तियों की पूजा करे—**१ अं अमृतायै नमः, २ मां मानदायै नमः, ३ तं तुष्टयै नमः, ४ पुं पुष्टयै नमः, ५ प्रीं प्रीत्यै नमः, ६ रं रत्यै नमः, ७ ह्रीं ह्रियै नमः, ८ श्रीं श्रियै नमः, ९ स्वं स्वधायै नमः, १० स्वां स्वाहायै नमः, ११ ज्यों ज्योत्स्नायै नमः, १२ हैं हैमवत्यै नमः, १३ छां छायायै नमः, १४ पूं पूर्णिमायै नमः, १५ नि नित्यायै नमः, १६ अं अमावास्यायै नमः ।**

अन्त में भूपुर में लोक-पालों का पूजन कर उनके अग्र भाग में उनके अस्त्रों का पूजन करे ।

इस प्रकार **'पूजा-यन्त्र'** में बाह्य पूजन कर जप करने से श्री अन्न-पूर्णा का मन्त्र सिद्ध हो जाता है । तब उस साधक के पास कुबेर के समान धन एकत्र हो जाता है और लोग उसकी वन्दना करने तथा अपना आश्रय-दाता मानने लगते हैं ।

(१५१)

बिल्व-पत्र का अर्पण

['कौल-कल्पतरु' पण्डित देवीदत्त शुक्ल द्वारा संग्रहीत एक प्राचीन पाण्डुलिपि के आधार पर]

त्रि-दलं त्रि-गुणाकारं, त्रि-नेत्रं च त्रिधा युतम् । त्रि-जन्म-पाप-संहारं, बिल्व-पत्रं शिवार्पणम् ॥१
त्रि-शाखैः बिल्व-पत्रैश्च, अच्छिद्रैः कोमलैः शुभैः । तव पूजां करिष्यामि, बिल्व-पत्रं शिवार्पणम् ॥२
अखण्डैर्विल्व-पत्रैश्च, पूजितो नन्दि-शङ्करः । मुच्यते सर्व-पापेभ्यो, बिल्व-पत्रं शिवार्पणम् ॥३

तीन दलोंवाले, तीन गुणों (सत्त्व, रज, तम) से युक्त तीन नेत्रों एवं तीन वृत्तियों से समन्वित, तीनों जन्मों के पापों का संहार करनेवाले **'बिल्व-पत्र'** को शिव जी को अर्पित करता हूँ। तीन शाखाओं-वाले, छिद्रों से रहित, कोमल एवं कल्याणकारी बिल्व-पत्रों से मैं तुम्हारी पूजा करूँगा। यह बिल्व - पत्र शिव जी को अर्पित है। समूचे बिल्व-पत्रों के द्वारा नन्दि-शङ्कर भगवान् की पूजा करने से मनुष्य सब पापो से छूट जाता है। यह बिल्व-पत्र शिव जी को अर्पित है ॥१-३

अज्ञानेन कथं देवं, परमेष्टी दुर्लभं यशः। श्रियः प्राप्ति-कामेन, बिल्व - पत्र शिवार्पणम् ॥४
अमृतोद्भव-वृक्षस्य, महा-देव-प्रियस्य च। बिल्व-पत्रं प्रदास्यामि, बिल्व - पत्रं शिवार्पणम् ॥५

अज्ञान के द्वारा भगवान् कैसे प्रसन्न हों ? श्रेष्ठ कामना से यह बिल्व - पत्र शिव जी को अर्पित है। महा - देव को प्रिय और अमृत से उत्पन्न वृक्ष बिल्व के पत्ते मैं प्रदान करूँगा। शिव जी को यह बिल्व-पत्र अर्पित है ॥४-५

शालिग्रामे यो विप्राणां, तडागे दश - कूपयोः। यज्ञ-कोटि-सहस्राणि, बिल्व-पत्रं शिवार्पणम् ॥६
गवां कोटि-सहस्रैश्च, सुवर्णश्च कोटयः। तत्-फलं बिल्व-पत्रं स्यात्, बिल्व-पत्रं शिवार्पणम् ॥७
हस्ति-कोटि-सहस्रैश्च, अश्व-मेध-कृतं शतम्। कोटि-कन्या-महा-दानं, बिल्व-पत्रं शिवार्पणम् ॥८

शालिग्राम की पूजा से, ब्राह्मणों की पूजा से, दस कुएँ एवं तालाब बनवाने से, सहस्र करोड़ यज्ञों से जो फल होता है, वही फल देनेवाला बिल्व-पत्र शिव जी को अर्पित है। सहस्र करोड़ गायों के दान से और करोड़ो सुवर्ण-मुद्राओं के दान से जो फल होता है, वही फल बिल्व-पत्र से मिलता है। अतः यह बिल्व - पत्र शिव जी को अर्पित है। सहस्र करोड़ हाथियों के दान से, अश्वमेध यज्ञों से, करोड़ कन्याओं के महान् दान से जो फल मिलता है, वही फल देनेवाला यह बिल्व - पत्र शिव जी को अर्पित है ॥६-७

तुलसी-बिल्व-निर्गुण्डि, जम्बीरा मलकिस्तथा। पञ्च-बिल्वमिति स्वान्तं, बिल्व-पत्रं शिवार्पणम् ॥९
व्याघ्र - चर्म - धरं देवं, नागाभरण-भूषितम्। कमण्डलु-जटा-जूटं, बिल्व-पत्रं शिवार्पणम् ॥१०

तुलसी, बिल्व, निर्गुण्ड, नीबू और मल्लिका—ये पञ्च-बिल्व हैं। यह बिल्व - पत्र शिव जी को अर्पित है। व्याघ्र-चर्म को धारण करनेवाले, नागों के आभूषण से शोभायमान, कमण्डलु एवं जटा - जूट से युक्त भगवान् शिव को यह बिल्व-पत्र अर्पित है ॥९-१०

उमया सहितं देवं, नन्दि - वाहनमेव च। भस्म-लेपितं सर्वाङ्गं, बिल्व-पत्रं शिवार्पणम् ॥११
सहस्र-पारायणं कृत्वा, द्विजानां पालनं महत्। अन्न-दान-सहस्राणि, बिल्व-पत्रं शिवार्पणम् ॥१२
दर्शनं बिल्व - पत्रैश्च, स्पर्शनं पाप - नाशनं। अघोर-पाप-संहारं, बिल्व-पत्रं शिवार्पणम् ॥१३

उमा के सहित नन्दी पर सवार, सर्वाङ्ग में भस्म लगाए हुए भगवान् शिव जी को यह बिल्व-पत्र अर्पित है। हजारों अनुष्ठान करके बहुत से ब्राह्मणों का पालन-पोषण करने एवं हजारों भिक्षुओं को अन्न-दान करने से जो फल मिलता है, वही फल देनेवाला यह बिल्व-पत्र शिव जी को अर्पित है। बिल्व-पत्र का दर्शन एवं स्पर्श पापों का नाश करता है और अक्षम्य पाप भी नष्ट होते हैं। अतः यह बिल्व-पत्र शिव जी को अर्पित है ॥११-१३

(१५२)

श्रीसरस्वती-विश्व-जयं कवचम्

शृणु वत्स ! प्रवक्ष्यामि, कवचं सर्व-कामदम् । श्रुति-सारं श्रुति-सुखं, श्रुत्युक्तं श्रुति-पूजितम् ।
उक्तं कृष्णेन गो-लोके, मह्यं वृन्दावने वने । रासेश्वरेण विभुना, रासने रास-मण्डले ।
अतीव-गोपनीयं च, कल्प-वृक्ष-समं परम् । अश्रुताऽद्भुत-मन्त्राणां समूहैश्च समन्वितम् ।
यद्धृत्वा पठनाद् ब्रह्मन् ! बुद्धिमांश्च बृहस्पतिः । यद्धृत्वा भगवाञ्छुक्रः, सर्व-दैत्येषु पूजितः ।
पठनाद् धारणाद् वाग्मी, कवीन्द्रो वाल्मीको मुनिः । स्वायम्भुवो मनुश्चैव, यद्धृत्वा सर्वपूजितः
कणादो गौतमः कण्वः, पाणिनिः शाकटायनः । ग्रन्थं चकार यद्धृत्वा, दक्षः कात्यायनः स्वयं ।
धृत्वा वेद-विभागं च, पुराणान्यखिलानि च । चकार लीला-मात्रेण कृष्ण-द्वैपायनः स्वयम् ।
शातातपश्च सम्वर्त्तो, वसिष्ठश्च पराशरः । यद्धृत्वा पठनाद् ग्रन्थं, याज्ञवल्क्यश्चकार सः ।
ऋष्य-शृङ्गो भरद्वाजश्चाऽऽस्तीको देवलस्तथा । जैगीषव्योऽथ जाबालिर्यद् धृत्वा सर्वपूजितः ।
कवचस्याऽस्य विप्रेन्द्र ! ऋषिरेव प्रजा-पतिः । स्वयं बृहस्पतिश्छन्दो, देवो रासेश्वरः प्रभुः ।
सर्व-तत्त्व-परिज्ञान-सर्वार्थ-साधनेषु च । कवितासु च सर्वासु, विनियोगः प्रकीर्तितः ।

॥ मूल पाठ ॥

ॐ ऐं सरस्वत्यै स्वाहा, शिरो मे पातु सर्वतः, ऐं वाग्देवतायै स्वाहा, भालं मे सर्वदाऽवतु ।
ॐ ऐं सरस्वत्यै स्वाहा, श्रोत्रं पातु निरन्तरम्, ॐ ह्रीं भारत्यै स्वाहेति, नेत्रयुग्मं सदाऽवतु ।
ऐंह्रीं वाग्वादिन्यै स्वाहा, नासा मे सर्वतोऽवतु, ह्रीं विद्याऽधिष्ठातृदेव्यै, स्वाहा ओष्ठं सदाऽवतु ।
ॐ श्रीं ह्रीं ब्राह्म्यै स्वाहेति, दन्त-पङ्क्तीं सदाऽवतु, ऐमित्येकाक्षरो मन्त्रो, मम कण्ठं सदाऽवतु ।
ॐ श्रीं ह्रीं पातु मे ग्रीवां,स्कन्धं मे श्रीं सदाऽवतु, श्रीं विद्याऽधिष्ठातृदेव्यै, स्वाहा वक्षः सदाऽवतु ।
ॐ विद्या-स्वरूपायै च, स्वाहा मे पातु नाभिकाम्, ॐह्रीं ह्रींवाण्यै स्वाहेति, मम पृष्ठं सदाऽवतु ।
ॐ सर्व-वर्णात्मिकायै, पद्म-युग्मं सदाऽवतु, ॐ रागाधिष्ठातृदेव्यै, सर्वाङ्गं मे सदाऽवतु ।
ॐ सर्व-कण्ठ-वासिन्यै, स्वाहा प्राच्यां सदाऽवतु, ॐह्रीं जिह्वाग्रवासिन्यै, स्वाहाऽग्निदिशि रक्षतु ।
ॐ ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं सरस्वत्यै बुध-जनन्यै स्वाहा, सततं मन्त्र-राजोऽयं, दक्षिणे मां सदाऽवतु ।
कवि-जिह्वाग्र-वासिन्यै, स्वाहा मां वारुणेऽवतु, ॐ सदाऽम्बिकायै स्वाहा, वायव्ये मां सदाऽवतु।

ॐ गद्य-पद्य-वासिन्यै, स्वाहा मामुत्तरेऽवतु । ॐ सर्व-शास्त्र-वासिन्यै, स्वाहैशान्यां सदाऽवतु । ॐह्रीं सर्व-पूजितायै, स्वाहा चोर्ध्वं सदाऽवतु, ऐं ह्रीं पुस्तक-वासिन्यै, स्वाहाऽधो मां सदाऽवतु । ग्रन्थ-बीज-स्वरूपायै, स्वाहा मां सर्वतोऽवतु ।।

।। फल-श्रुति ।।

इति ते कथितं विप्र ! सर्व-मन्त्रौघ-विग्रहम् । इदं विश्व-जयं नाम, कवचं ब्रह्म-रूपिणम् । पुरा श्रुतं धर्म-वक्त्रात्, पर्वते गन्ध-मादने । तव स्नेहान् मयाऽऽख्यातं, प्रवक्तव्यं न कस्यचित् । गुरुमभ्यर्च्य विधि-वद्, वस्त्रालङ्कार-चन्दनैः । प्रणम्य दण्ड-वद् भूमौ, कवचं धारयेत् सुधीः । पञ्च-लक्ष-जपेनैव, सिद्धं तु कवचं भवेत् । यदि स्यात् सिद्ध-कवचो, बृहस्पति-समो भवेत् । महा-वाग्मी कवीन्द्रश्च, त्रैलोक्य-विजयी भवेत् । शक्नोति सर्वं जेतुं सः, कवचस्य प्रसादतः । इति ते काण्व-शाखोक्तं, कथितं कवचं मुने !।।

।। श्रीब्रह्म-वैवर्त-महा-पुराणे नारायण-नारद-सम्वादे सरस्वती-विश्व-जयं कवचं ।।

(१५३)

'श्रीगिरिजा-दशक' : एक सिद्ध प्रयोग

बैल पर बैठे हुए शिव-पार्वती का ध्यान कर माँ पार्वती से दया की भीख माँगनी चाहिए । माँ देगी, पेट दिखाते जाना चाहिए । जैसे सन्तान पेट दिखाकर माता से माँगती है, वैसे ही माँगना चाहिए । कल्याण की इच्छा होगी, तो माँ अवश्य सर्वतोमुखी कल्याण करेंगी । यह अनुभूत सरल प्रयोग है । इसी आशय का एक सिद्ध स्तोत्र प्रस्तुत है— **पं. कृष्णानन्द मिश्र 'वैद्य', ककरा, दुबावल, प्रयाग**

मन्दार-कल्प - हरि-चन्दन-पारिजात—मध्ये सुधाब्धि-मणि-मण्डप-वेदि-संस्थे ।
अर्धेन्दु-मौलि-सु-ललाट षडर्ध-नेत्रे, भिक्षां प्रदेहि गिरिजे ! क्षुधिताय मह्यम् ।।१
आली-कदम्ब-परिशोभित - पार्श्व-भागे, शक्रादयः सुर-गणाः प्रणमन्ति तुभ्यम् ।
देवि ! त्वदीय चरणे शरणं प्रपद्ये, भिक्षां प्रदेहि गिरिजे ! क्षुधिताय मह्यम् ।।२
केयूर-हार-मणि-कङ्कण-कर्ण - पूरे, काञ्ची - कलापमणि - कान्त - लसद्-दुकूले ।
दुग्धान्न-पूर्ण-वर-काञ्चन-दर्वि-हस्ते, भिक्षां प्रदेहि गिरिजे ! क्षुधिताय मह्यम् ।।३
सद्-भक्त - कल्प-लतिके भुवनैक-वन्द्ये, भूतेश-हृत्-कमल-लग्न-कुचाग्र-भृङ्गे !
कारुण्य-पूर्ण-नयने किमुपेक्ष्यसे मां, भिक्षां प्रदेहि गिरिजे ! क्षुधिताय मह्यम् ।।४
शब्दात्मिके शशि-कलाऽऽभरणाब्धि-देहे, शम्भोः उरु-स्थल-निकेतन-नित्य-वासे !
दारिद्र्य-दुःख-भय-हारिणि! का त्वदन्या, भिक्षां प्रदेहि गिरिजे!क्षुधिताय मह्यम् ।।५
लीला-वचांसि तव देवि ! ऋगादि-वेदाः, सृष्ट्यादि-कर्म-रचना भवदीय-चेष्टाः ।
त्वत्-तेजसा जगत् इदं प्रतिभाति नित्यं, भिक्षां प्रदेहि गिरिजे! क्षुधिताय मह्यम् ।।६

वृन्दार-वृन्द-मुनि-नारद-कौशिकात्रि - व्यासाम्बरीष-कलशोद्भव-कश्यपादयः ।
भक्त्या स्तुवन्ति निगमागम-सूक्त-मन्त्रैः, भिक्षां प्रदेहि गिरिजे ! क्षुधिताय मह्यम् ॥७

अम्ब ! त्वदीय चरणाम्बुज-सेवनेन, ब्रह्मादयोऽपि विपुलाः श्रियमाश्रयन्ते ।
तस्मादहं तव नतोऽस्मि पदारविन्दे, भिक्षां प्रदेहि गिरिजे ! क्षुधिताय मह्यम् ॥८

सन्ध्यालये सकल-भू-सुर-सेव्यमाने, स्वाहा स्वधाऽसि पितृ-देव-गणार्त्ति-हन्त्रि !
जाया सुतो परिजनोऽतिथयोऽन्य-कामा, भिक्षां प्रदेहि गिरिजे! क्षुधिताय मह्यम् ॥९

एकात्म-मूल-निलयस्य महेश्वरस्य, प्राणेश्वरि ! प्रणत - भक्त - जनाय शीघ्रम् ।
कामाक्षि ! रक्षित-जगत-त्रितये अन्न-पूर्णे, भिक्षां प्रदेहि गिरिजे ! क्षुधिताय मह्यम् ॥१०

भक्त्या पठन्ति गिरिजा-दशकं प्रभाते, कामार्थिनो बहु धनान्न-समृद्धि-कामा ।
प्रीत्या महेश-वनिता हिम-शैल-कन्या, तेभ्यो ददाति सततं मनसेप्सितानि ॥११

मन्दार-कल्पवृक्ष, श्वेत चन्दन एवं पारिजात वृक्षों के मध्य में अमृत - सिन्धु के बीच मणि-मण्डप की वेदी पर बैठी हुई, सुन्दर ललाट पर अर्ध-चन्द्रमा से सुशोभिता एवं तीन नेत्रोंवाली हे गिरिजे ! मुझ भूखे को भोजन दीजिए । आपके दोनों ओर सखियाँ शोभायमान हैं, इन्द्रादि देव - गण आपको नमस्कार करते हैं, हे देवि ! मैं आपके चरणों की शरण लेता हूँ । मुझ भूखे बालक को भोजन दीजिए । भुजबन्ध, मणियों का हार, कङ्कन, कर्णाभूषण, करधनी और मणियों के समान सुन्दर वस्त्र पहने तथा हाथों में खीर से भरी हुई श्रेष्ठ सोने की थाली लिए हे गिरिजे ! मुझ भूखे को भोजन दीजिए । कल्प-लता के समान सच्चे भक्तों की सभी कामनाओं को पूर्ण करनेवाली, अखिल-विश्व-पूजिता, भगवान् शङ्कर के हृदय-कमल में अपने कुचाग्र-रूपी भौंरों के द्वारा प्रविष्टा और दया - पूर्ण नेत्रोंवाली हे माँ गिरिजे ! मुझ भूखे को भोजन दीजिए । शब्द-ब्रह्म-स्वरूपे, अर्द्ध-चन्द्र के आभूषण से विभूषित शरीरवाली और शिव के हृदय में सदा निवास करनेवाली, आपके अतिरिक्त दरिद्रता के दुःख और भय को दूर करने-वाला अन्य कोई नहीं है । हे गिरिजे ! मुझ भूखे को भोजन दीजिए । हे देवि ! ऋक् आदि वेदों की वाणी आपके ही लीला-वचन हैं । सृष्टि आदि क्रियाएँ आपकी ही चेष्टा हैं । आपके तेज से ही यह विश्व सदा दिखाई देता है । हे गिरिजे ! मुझ भूखे को भोजन दीजिए । देव-समूह, मुनि नारद, कौशिक, अत्रि, व्यास, अम्बरीष, अगस्त्य, कश्यप आदि भक्ति-पूर्वक वेद और तन्त्र के सूक्त-मन्त्रों से आपकी स्तुति करते हैं । हे माँ गिरिजे ! मुझ भूखे को भोजन दीजिए । हे माँ ! तुम्हारे चरणों की सेवा से ब्रह्मा आदि भी अपार ऐश्वर्य पा जाते हैं । अतः मैं आपके चरण - कमलों में नत - मस्तक हूँ । हे गिरिजे ! मुझ भूखे को भोजन दीजिए । सन्ध्या समय समस्त ब्राह्मणों द्वारा वन्दिता, पितरों व देवों के दुःख की नाशिका 'स्वाहा-स्वधा' आप ही हैं । मैं पत्नी, पुत्र, सेवक, अतिथियों एवं अन्य कामनाओंवाला हूँ । हे गिरिजे ! मुझ भूखे को भोजन दीजिए । हे एकात्मा-मूल महेश्वर की प्राणेश्वरि ! प्रणत भक्तों पर शीघ्र कृपा करनेवाली हे कामाक्षि ! हे अन्न-पूर्णे ! तीनों लोकों की रक्षा करनेवाली हे गिरिजे ! मुझ भूखे को भोजन दीजिए । बहु-धन-अन्न और ऐश्वर्य चाहनेवाले जो लोग प्रातः - काल इस **'गिरिजा - दशक'** को पढ़ते हैं, उन्हें महेश-प्रिया, हिमालय-पुत्री सदैव प्रेम-पूर्वक मन-चाही वस्तुएँ प्रदान करती हैं ॥१-११ ● ●

(१५४)

विपरीत-प्रत्यंगिरा विधान

ज्योतिषी पं० शशिभूषण शर्मा गौड़, श्री सत्येश्वर ज्योतिष अनुसन्धान केन्द्र, खिरकियाँ (म. प्र.)

'चण्डी' वर्ष ५१, **साधन-माला,** (अक्टूबर, १९९२) के क्रमाङ्क ७७ पर **'विपरीत प्रत्यङ्गिरा'** का विधान छपा है, जिसके प्रकाशक सिद्ध - वैद्य पूज्य पं० कृष्णानन्द जी मिश्र हैं। **'प्रत्यङ्गिरा मन्त्र'** में कुछ त्रुटि है। अतः पाठक बन्धु उसे सुधारकर लाभ उठाएँ।

श्रीप्रत्यङ्गिरा मन्त्र—ॐ ह्रीं यां कल्पयन्ति नोऽरयः क्रूरां कृत्यां वधूमिव ह्रां ब्रह्मणा अपनिर्णुद्मः प्रत्यक् कर्तारमृच्छतु ह्रीं ॐ।

विनियोग—अस्य प्रत्यङ्गिरा-मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। देवी प्रत्यङ्गिरा देवता। ॐ बीजं। ह्रीं शक्तिः। ममाखिलावाप्तये जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—ॐ ब्रह्मर्षये नमः शिरसि। अनुष्टुप् - छन्दसे नमः मुखे। देवी प्रत्यङ्गिरा-देवतायै नमः हृदि। ॐ बीजाय नमः लिङ्गे। ह्रीं शक्तये नमः पादयोः। ममाखिलावाप्तये जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

षडङ्ग-न्यास(कर और अङ्ग)—ॐ ह्रीं यां कल्पयन्ति नोऽरयः अंगुष्ठाभ्यां नमः (हृदयाय नमः)। ॐ ह्रीं क्रूरां कृत्यां तर्जनीभ्यां नमः (शिरसे स्वाहा)। ॐ ह्रीं वधूमिव मध्यमाभ्यां नमः (शिखायै वषट्)। ॐ ह्रीं ह्रां ब्रह्मणा अनामिकाभ्यां नमः (कवचाय हुं)। ॐ ह्रीं अपनिर्णुद्मः कनिष्ठिकाभ्यां नमः (नेत्र-त्रयाय वौषट्)। ॐ ह्रीं प्रत्यक् कर्तारमृच्छतु करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः (अस्त्राय फट्)।

मन्त्र-वर्ण-न्यास—ॐ ह्रीं यां ह्रीं शिरसि। ॐ ह्रीं कल्पयन्ति ह्रीं भ्रू - मध्ये। ॐ ह्रीं नो ह्रीं मुखे। ॐ ह्रीं अरयः ह्रीं कण्ठे। ॐ ह्रीं क्रूरां ह्रीं दक्ष-हस्ते। ॐ ह्रीं कृत्यां ह्रीं वाम-हस्ते। ॐ ह्रीं वधूं ह्रीं हृदि। ॐ ह्रीं इव ह्रीं नाभौ। ॐ ह्रीं ह्रां ह्रीं दक्षिणोरौ। ॐ ह्रीं ब्रह्मणा ह्रीं वामोरौ। ॐ ह्रीं अपनिर्णुद्मः ह्रीं दक्ष जानुनि। ॐ ह्रीं प्रत्यक् ह्रीं वाम-जानुनि। ॐ ह्रीं कर्तारं ह्रीं दक्ष - पादे। ॐ ह्रीं ऋच्छतु ह्रीं वाम-पादे।

ध्यान—आशाम्बरामक्-कचा घनच्छविर्ध्येया स-चर्मासि-कराहि-भूषणा।
दंष्ट्रोग्र-वक्त्रा ग्रसिता हि तान् वया प्रत्यङ्गिरा शङ्कर-तेजसेरिता॥

ध्यान कर मानसोपचारों से पूजा कर मन्त्र का १०८ बार जप करे।

श्रीमान् वैद्य कृष्णानन्द जी के द्वारा प्रकाशित मन्त्र में **'तां'** है किन्तु 'ह्रां' होना चाहिए। **'निर्णुयुः'** के स्थान में **'अपनिर्णुद्मः'** और **प्रत्यर्तारमृच्छतु'** के स्थान में **'प्रत्यक् कर्तारमृच्छतु'** होना चाहिए। ध्यान, न्यास और विनियोग भी नहीं दिए हैं। ये सब यहाँ दिए गए हैं। **'श्री प्रत्यङ्गिरा पूजन-यन्त्र'** में **'षट्'कोण'** बनाकर उसके मध्य में मन्त्र लिखे—**'ॐ ह्रीं यां कल्प०।'** 'षट्-कोण' के बाहर चतु-र्द्वार युक्त **'भूपुर'** अङ्कित करे।

साधकों के लाभार्थ **'श्रीप्रत्यङ्गिरा'** का एक अन्य प्रयोग भी यहाँ प्रस्तुत है—

विनियोग—अस्य प्रत्यङ्गिरा-माला-मन्त्रस्य ब्रह्मा ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। देवी प्रत्यङ्गिरा देवता। ॐ बीजं। ह्रीं शक्तिः। ममाखिलावाप्तये जपे विनियोगः।

ऋष्यादि-न्यास—ॐ ब्रह्मर्षये नमः शिरसि। अनुष्टुप् - छन्दसे नमः मुखे। देवी - प्रत्यङ्गिरा-देवतायै नमः हृदि। ॐ बीजाय नमो लिङ्गे। ह्रीं शक्तये नमः पादयोः। ममाखिलावाप्तये जपे विनियोगाय नमः सर्वाङ्गे।

कर-न्यास	हृदयादि-न्यास
ॐ ह्रीं अंगुष्ठाभ्यां नमः	ॐ ह्रीं हृदयाय नमः
ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः	ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा
ॐ ह्रीं मध्यमाभ्यां नमः	ॐ ह्रीं शिखायै वषट्
ॐ ह्रीं अनामिकाभ्यां नमः	ॐ ह्रीं कवचाय हुं
ॐ ह्रीं कनिष्ठिकाभ्यां नमः	ॐ ह्रीं नेत्र-त्रयाय वौषट्
ॐ ह्रीं करतल-कर-पृष्ठाभ्यां नमः	ॐ ह्रीं अस्त्राय फट्

ध्यान—ॐ सिंहारूढाति-कृष्णा त्रिभुवन-भव-कृद्-रूपमुग्रं वहन्ती।
ज्वाला-वक्त्रा वसाना नव-वसन-युगं नील-मण्याभ-कान्तिः॥
शूलं खड्गं वहन्ती निज-कर - युगले भक्त-रक्षैक-दक्षा।
सेयं प्रत्यङ्गिरा संक्षपयतु रिपुभिर्निर्मितान्नोऽभिचारान्॥

मानसोपचारों से पूजा कर जप करे—

माला-मन्त्र—ॐ ह्रीं नमः कृष्ण-वासने, शत-सहस्र हिंसिनि, सहस्र-वदने, महा-बले, अपराजिते, प्रत्यङ्गिरे, पर-सैन्य-पर-कर्म-विध्वंसिनि, पर-मन्त्रोत्सादिनि, सर्व-भूत - दमने ! सर्व - देवान् बन्ध बन्ध, सर्व-विद्याश्छिन्धि छिन्धि, क्षोभय क्षोभय, पर-यन्त्राणि स्फोटय स्फोटय, सर्व - शृङ्खलास्त्रोटय त्रोटय, ज्वलज्ज्वाला-जिह्वे, कराल-वदने, प्रत्यङ्गिरे ! ह्रीं नमः।

'मातृका-न्यास' करके माला-मन्त्र का जप करे। मन्त्र-जप के पूर्व **'गायत्री-मन्त्र'** का जप करे। प्रति-दिन ११ माला जप करे। कम-से-कम ४ माला का विधान है। १० सहस्र जप एवं उसका दशांश हवन करे, तो 'माला-मन्त्र' का 'पुरश्चरण' होगा। अपामार्ग की समिधा में तिल, आज्य (घी), रक्त-चन्दन, गुगल से हवन करे। इस प्रकार मन्त्र सिद्ध होने पर प्रयोग में लाए। मन्त्र गुरु-मुख से पाकर ही पूर्ण जानकारी के साथ प्रयोग करना चाहिए अन्यथा नहीं।

आवश्यक सूचना :

दूसरा त्रि-दिवसीय साधना-सत्र

त्रयोदशी, चतुर्दशी, पूर्णिमा माघ शुक्ल २०५० वि०-२४, २५, २६ फरवरी, १९९४

विद्वान् लेखक बन्धुओं, मान्य सहायकों एवं पाठक बन्धुओं को यह जानकर प्रसन्नता होगी कि उपर्युक्त तिथियों पर प्रसिद्ध पितृ-तीर्थ एवं भैरवी - चक्र पर अवस्थित नगरी गया (बिहार) में साधना-सत्र (द्वितीय) का आयोजन होने की सम्भावना है। जो बन्धु उक्त आयोजन में सम्मिलित होकर, हिन्दू-धर्म के ज्ञान-मय क्रियात्मक पक्ष के प्रसार में अपना सहयोग देना चाहते हों, वे कृपया सूचित करेंगे, जिससे उन्हें कार्य-क्रम की सूचना भेजी जा सके।

व्यवस्थापक, 'चण्डी'-कार्यालय, अलोपी देवी मार्ग, प्रयाग-६

[**'चण्डी'** के इस स्तम्भ का कितना महत्त्व है, यह 'जिज्ञासु' बन्धु ही बता सकते हैं। इस बार एक ऐसे उच्चकोटि के 'जिज्ञासु बन्धु' से सम्पर्क का सौभाग्य मिला, जो न केवल अपनी 'जिज्ञासाओं का समाधान' पाने को प्रयत्नशील हैं, अपितु उन समाधानों को सभी जिज्ञासुओं के लाभार्थ 'चण्डी' में प्रकाशित कराने को तत्पर हुए हैं। ये 'जिज्ञासु बन्धु' हैं—पटना (बिहार) के **'कुल-वाणी-रत्न'** पण्डित ताराकान्त जी मिश्र। आपने जो जिज्ञासाएँ की हैं और उनके जो समाधान आपको मिले हैं, वे आपके ही शब्दों में यहाँ ज्यों - के - त्यों प्रकाशित हैं। आशा है, इनके प्रकाशन से सभी पाठकों एवं जिज्ञासुओं को विशेष उद्‌बोधन मिल सकेगा और वे मिश्र जी के प्रयास का महत्त्व हृदयङ्गम करेंगे।—सं०]

जिज्ञासा : 'चण्डी' वर्ष ५१, मई, ९२, पृष्ठ ५६—**'सर्वारिष्ट - निवारण-स्तोत्र'** पंक्ति १८ में—**'स्त्री-प्राप्ति कुरु कुरु, हुम् फट् स्वाहा।'**

१. इस स्तोत्र का पाठ हर नर-नारी, बालक एवं बालिका कर सकती हैं क्योंकि शीर्षक का भाव **'सभी कष्टों का निवारण'** है, किन्तु स्तोत्र की उक्त पंक्ति भ्रामक है। विवाहित व्यक्ति **'स्त्री-प्राप्ति'** की अभिलाषा कैसे कर सकता है ? २ बालिका द्वारा भी **'स्त्री-प्राप्ति'** की अभिलाषा नहीं हो सकती। ३ विवाहिता स्त्री के लिए **'स्त्री-प्राप्ति'** की अभिलाषा का प्रश्न ही नहीं उठता। ४ हाँ, एक अविवाहित व्यक्ति को **'स्त्री - प्राप्ति'** की अभिलाषा हो सकती है। अतः जिज्ञासा यह है कि शेष तीनों इस **'स्त्री-प्राप्ति'** शब्दों का पाठ किस उद्देश्य से करें ?

२. पृष्ठ ५८ पर 'श्री भृगु-संहिता' के 'सर्वारिष्ट-निवारण-खण्ड' में उक्त अनुभूत स्तोत्र के ४० पाठ करने की विधि बताई गई है, जिसके सम्बन्ध में दो जिज्ञासाएँ हैं—

(१) चालिस पाठ क्या एक ही दिन में करने हैं ? अथवा (२) एक-एक पाठ कर क्या ४० दिनों में ४० पाठ करने हैं ?

३. किसी भी देवता या देवी की 'प्रतिमा' या 'यन्त्र' के सामने बैठ कर धूप-दीपादि से उसका पूजन कर उक्त स्तोत्र का पाठ करना चाहिए। क्या इस स्तोत्र के पाठ के लिए अलग से पूजा करनी चाहिए या दैनिक पूजा करने के बाद 'पाठ' कर सकते हैं ?

४. विशेष लाभ की इच्छा हो, तो **'स्वाहा'** और **'नमः'** का उच्चारण करते हुए **'घृत - मिश्रित गुग्गुल'** से आहुतियाँ दे सकते हैं। क्या आहुतियाँ निम्न प्रकार दे सकते हैं—

१ ॐ गं गणपतये नमः स्वाहा। सर्व - विघ्न - विनाशनाय, सर्वारिष्ट-निवारणाय, सर्व-सौख्य-प्रदाय, बालानां बुद्धि - प्रदाय, नाना-प्रकार-धन-वाहन-भूमि-प्रदाय, मनोवाञ्छित- फल - प्रदाय रक्षां कुरु स्वाहा, स्वाहा॥

२—'ॐ गं गणपतये नमः, नमः' या 'ॐ गं गणपतये नमः स्वाहा नमः' ?

कृपया स्पष्ट करेंगे। पृष्ठ ५८ पर पंक्ति १२ के प्रारम्भ का शब्द स्पष्ट नहीं है। क्या वह **'यान्यथा'** है ?

समाधान : 'स्त्री-प्राप्ति' शब्दों के सम्बन्ध में यह समझना चाहिए कि 'अविवाहित' या 'वियोगी' पुरुष के लिए **'नारी'** की प्राप्ति ही लक्ष्य है किन्तु जैसा कि 'शीर्षक' से बोध होता है, यह मन्त्र सर्वोपयोगी है, अतः 'स्त्री' शब्द का अर्थ है **'त्रिपुरेश्वरी'**। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि किसी भी शब्द के अनेक अर्थ होते हैं—शब्दार्थ, भावार्थ, लक्ष्यार्थ और सन्दर्भार्थ। **'मन्त्र-विद्या'** गहन और गूढ़ है। उसके ज्ञाता जानते हैं कि 'स्त्री' शब्द एक **'बीज-मन्त्र'** भी है, जिसे **'वधू-बीज'** कहते हैं। भगवती कामाख्या, त्रिपुरा, तारा आदि का यह मन्त्र है। त्रिगुणा महा-काली - महा-लक्ष्मी - महा-सरस्वती इसका 'लक्ष्यार्थ' है।

४० पाठ करने से **'पुरश्चरण'** होता है। यह साधक की सुविधा और क्षमता पर है कि वह एक ही दिन में ४० पाठ करे या ४० दिनों में। नित्य-पाठ करने से भी स्तोत्र सिद्ध हो जायगा। इस स्तोत्र को **'भोज-पत्र'** पर लिखकर उसके ऊपर ४० पाठ करके अपने पास रखने से **'सर्व - कार्य - सिद्धि'** होती है।

किसी भी 'देव-प्रतिमा' या 'यन्त्र' के सामने पूजन कर उक्त पाठ कर सकते हैं। **'नित्य-कर्म—पाठ-पूजन'** के अन्त में भी 'स्तोत्र-पाठ' कर सकते हैं। अलग से पूजन करने की आवश्यकता नहीं है। आहुतियाँ इस प्रकार देनी चाहिए—१ **ॐ गं गणपतये नमः**, २ **रक्षां कुरु कुरु स्वाहा**, ३ **ॐ ऐः ठः ठः**, ४ **ॐ चक्रिण्या अहं रक्षां कुरु कुरु। ५ नमः कुरु कुरु ठः ठः स्वाहा।**

'नमः' के बाद **'स्वाहा'** या **'स्वाहा'** के बाद **'नमः'** शब्द नहीं लगाना चाहिए। शब्द - संख्या बढ़ने से मन्त्र का रूप बदल जाता है। अतः जो शब्द दिए हैं, वे ही रखने चाहिए।

पृष्ठ ५८ की पंक्ति १२ का शुद्ध रूप है—**नान्यथा श्रुतये विद्यां, पठति कथितं मया।**

पुनः जिज्ञासा : इतना बड़ा स्तोत्र **'भोज-पत्र'** पर लिखना कोई सरल कार्य नहीं है। आज बाजार में जो **'भोज-पत्र'** मिलता है, वह बड़ा पतला और छोटा होता है। अनार की कलम से लिखने पर वह फट जाता है। क्या अन्य कोई सरल विधि नहीं है? यदि पूरा स्तोत्र **'ॐ गं गणपतये नमः'** से लेकर **'शीघ्रं ते च पलायनम् ॥९'** तक लिखा जाय, तो कम-से-कम ५० भोज - पत्र लगेंगे, जिसका मूल्य १०० रु० से अधिक ही होगा। फिर इतने भोज - पत्रों को ताबीज में कैसे रखेंगे? क्या अन्य कोई माध्यम है?

आपका ही एक अन्य **'सर्व-कामना-सिद्धि स्तोत्र'** अति सरल है, जो **'चण्डी'**, अङ्क ६, सितम्बर, १९९२, पृष्ठ १८५ पर प्रकाशित है। इस स्तोत्र से 'यन्त्र-पूजा' की विधि क्या है?

पुनः समाधान : **'भोज-पत्र'** पर पूरा स्तोत्र लिखने की आवश्यकता नहीं है, अपितु **'यन्त्र'** या **'सर्वतोभद्र यन्त्र'** लिखने का विधान है—**'भोज-पत्रे लिखेद् यन्त्रं, गोरोचन-मयेन च।'**

उक्त **'यन्त्र'** का पूजन कर ४० पाठ का अनुष्ठान करे। तब **'भोज - पत्र'** पर लिखित उस **'यन्त्र'** को गले या बाहु में धारण करना चाहिए। ऐसा करना सभी के लिए सरल है।

'सर्व - कामना - सिद्धि स्तोत्र' में यन्त्र - पूजा उक्त दो में से किसी भी यन्त्र पर हो सकती है। **'श्रीहिरण्यमय'** से लेकर **'नव-ग्रह-दोष-निवारण'**—१४ श्लोक से इष्ट का आवाहन और स्तुति। बाद में **'ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं'** सर्व-कामना से पुष्प समर्पित कर ध्यान करे और यह भावना रखे कि—**'मम सर्वेप्सितं सर्व-कार्य-सिद्धिं कुरु कुरु स्वाहा।'**

फिर अनुलोम-विलोम क्रम से मन्त्र का जप करे–'**ॐ श्रीं ऐं ह्रीं क्लीं श्रीमहा-माया-महा-शक्त्यै क्लीं ह्रीं ऐं श्रीं ॐ।**'

सर्वारिष्ट-निवारक यन्त्र

सर्वतोभद्र यन्त्र

अं	आ	इं	ईं	
उं	ऊं	ऋं	ॠं	
लृं	ॡं	एं	ऐं	
ओं	औं	अं	अः	

ईशान		पूर्व		आग्नेय
	अं अः	अ आ क	इ ई च	
	ळं क्षं	ख ग घ ङ	छ ज झ	
उत्तर	ओ औ		उ ऊ ट	दक्षिण
	श ष स ह		ठ ड ढ ण	
	ए ऐ	ऌ ॡ	ऋ ॠ	
	य र ल व	प फ ब भ म	त थ द ध न	
वायव्य		पश्चिम		नैऋत

स्वेच्छानुसार जप करे। बाद में '**ॐ श्रीपारिजात-पुष्प-गुच्छ-धारिण्यै नमः**' आदि १६ मन्त्रों से यन्त्र में, यदि षोडश-पत्र हों, तो उनके ऊपर, अन्यथा यन्त्र में पूर्वादि - क्रम से पुष्पाञ्जलि प्रदान करे। तदनन्तर '**श्रीलक्ष्मी-यन्त्रेभ्यो नमः**' और '**श्री सर्व-कामना-सिद्धि-महा-यन्त्र-देवताभ्यो नमः**' से अष्ट-गन्ध या जो सामग्री मिले, उससे '**यन्त्र**' में पूजा करे। अन्त में '**लक्ष्मी-गायत्री**' पढ़कर पुष्पाञ्जलि देकर विसर्जन करे।

समाधान-कर्ता : श्री जे. एल. भारद्वाज, 'श्री चामुण्डा ज्योतिष केन्द्र', ए-१६०, नेमीनगर, राणीप, अहमदाबाद (गुजरात)

(२)

अशोक विहार, दिल्ली-५२ से श्री के० जी० पन्त लिखते हैं—

'**श्रीपीताम्बरा पीठ**' दतिया से दीक्षा पाने के पूर्व एक बार पूजा करते समय मुझे ऐसा लगा कि **भगवान् गणपति** कह रहे हैं कि '**मैं तुम्हारा गुरु हूँ।**' दतिया के मन्दिर में भी जब मैंने श्रीगुरु - मूर्ति को नमस्कार किया, तो श्रीगुरु - मूर्ति का ऊपरी भाग भगवान् गणपति के श्वेत सङ्गमर्मर जैसे रूप में बदलता मुझे दिखाई दिया। जब मैंने यह बात श्री मोतीलाल खड्डर जी को बताई, तो उन्होंने कहा कि 'भगवान् गणपति की आप पर विशेष कृपा प्रतीत होती है।' मैं इस रहस्य को समझ नहीं पा रहा हूँ। मेरे प्रथम गुरु कौन हैं ? इसका तात्पर्य क्या है ?

भगवान् गणपति जी मुझे कुछ-न-कुछ सदा दिखाया करते हैं। अनेक प्रकार से लगता है कि वे मेरे घर में विद्यमान हैं। दो-तीन बार मुझे स्वप्न में भी दर्शन दिए हैं। एक बार पूजा के समय मुझे '**श्रीं गं**' के दर्शन हुए। पुस्तकों में '**श्रीं ग्लौं**' मन्त्र तो मिलता है, किन्तु '**श्रीं गं**' का उल्लेख नहीं है। क्या यह कोई मन्त्र है अथवा इसे २८ अक्षरी '**श्री लक्ष्मी-विनायक**' मन्त्र का बोधक समझना चाहिए ?

मैंने '**श्वेतार्क-मूल**' को प्राप्त करने का बड़ा प्रयत्न किया, किन्तु पा नहीं सका। हाँ, उसकी एक टहनी अवश्य वृन्दावन में मिल गई। जैसा कि मुझे आभास हुआ था, मैंने उस टहनी की '**गणपति-मूर्ति**' बनवाई। अब समस्या यह है कि पुस्तकों में '**श्वेतार्क - मूल**' की मूर्ति बनवाने का विधान है, तो

क्या टहनी से बनी मूर्ति का पूजन उसी विधि से कर सकता हूँ ? यदि नहीं कर सकता, तो श्रीगणपति जी ने मूर्ति बनवाने का आभास क्यों दिया ?

पिछले नवरात्र में मैंने **'शरणागत-दीनार्त'** श्लोक से सम्पुटित श्रीदुर्गा सप्तशती का पाठ किया, तो मुझे मा मातङ्गी के दर्शन हुए । मैंने उनकी पूजा कभी नहीं की । हाँ, 'श्रीललिता-सहस्र-नाम' का पाठ अवश्य किया है । फिर श्रीमातङ्गी के दर्शन क्यों हुए ? मैंने माँ वगला के पञ्चाक्षर मन्त्र की दीक्षा ली है और दो ग्रहण-पुरश्चरण भी किए हैं । अब मुझे क्या करना चाहिए ?

'चण्डी'-कार्यालय की पुस्तकों से मुझे बड़ी सहायता मिली है किन्तु **'बलि'** आदि के सम्बन्ध में मैं किससे मार्ग - दर्शन प्राप्त करूँ ? अब मैं ६० वर्ष का हो चुका हूँ, थोड़ा ही समय बचा है । अतः उचित विधि-विधान हेतु मुझे कहाँ जाना चाहिए ? क्या 'श्रीभुवनेश्वरी महा-शक्ति पीठ', सीकर (राजस्थान) के श्री दाधीच जी के पास जाना उचित होगा ?

क्या प्रति - दिन **'बलि'** देना आवश्यक है ? यदि हाँ, तो यह **'बलि'** किस वस्तु की होनी चाहिए ? क्या **'उड़द का बड़ा'** या **'मोदक'** अथवा 'फल' आदि ?

क्या **'भगवती धूमावती'** की उपासना घर में नहीं करनी चाहिए ? श्री महाराज गुरु जी श्री माँ भगवती धूमावती के विषय में बड़ी प्रशंसा करते हैं । क्या गृहस्थ इनकी उपासना कर सकते हैं ?

क्या **'श्रीबटुक भैरव जी'** की उपासना उस व्यक्ति को नहीं करनी चाहिए, जिसकी पत्नी जीवित हो ? क्या **'कमल-गट्टे की माला'** पर सभी मन्त्रों का जप कर सकते हैं ? **'स्फटिक की माला'** का क्या महत्त्व है ? क्या **'श्वेतार्क गणपति जी'** के मन्त्र का जप **'स्फटिक-माला'** से ही करना चाहिए ? **'शाबर-मन्त्र-संग्रह'** प्रथम भाग के अनुसार **'शाबर शक्ति पाठ'** १११ बार एक ही रात्रि में करना कैसे सम्भव है ?

समाधान—श्री पन्त के पत्र से स्पष्ट है कि वे बड़े धर्म - निष्ठ हैं और भगवान् गणपति एवं भगवती बगला, श्रीदुर्गा आदि देवियों की उपासना में उनकी आस्था है, किन्तु कदाचित् उनका ध्यान अपनी **'कुल-परम्परा'** के प्रति नहीं गया है । सर्व-प्रथम व्यक्ति को यह पता लगाना चाहिए कि उसके पिता - पितामह आदि किस देवता की उपासना करते आए हैं और उसी उपासना को अग्रसर करना चाहिए । **'कुल-धर्म'** की उपेक्षा करने से भ्रमित रहना पड़ता है । प्रथम गुरु अपनी **'माँ'** ही होती हैं । **'पिता'** भी प्रथम गुरु के समान माननीय हैं । इन दोनों के बाद **'दीक्षा-गुरु'** आध्यात्मिक मार्ग के प्रथम गुरु बनते हैं । इन सबके साथ ही अपनी **'अन्तरात्मा'** निरन्तर प्रथम गुरु की भूमिका निभाती रहती है । लोग समझ नहीं पाते किन्तु जाग्रत् या स्वप्नावस्था में जो अनुभूतियाँ होती हैं, उनके पीछे **'आत्मा'** की ही प्रेरणा होती है । इस प्रेरणा की वास्तविकता समझने के लिए **'ज्योतिर्विद्या'** का सहारा लेना पड़ता है । इसीलिए भारत में प्रत्येक व्यक्ति की **'जन्म-कुण्डली'** बनाने की प्रथा प्रचलित है ।

सीकर के पूज्य श्री दाधीच जी दिवङ्गत हो चुके हैं । अच्छा होगा कि श्री पन्त जी उचित मार्ग-दर्शन हेतु दिल्ली में ही **'श्रीमातृका आश्रम'** में विराजमाना परम पूज्या स्नेह-मयी **'श्रीमती माधवी माँ'** से सम्पर्क करें । उनका दूर-भाष है : ६४३७३०३ ।

ॐ नमः शिवाय

रजि० संख्या
32981/57

माघ, २०५० वि० - फरवरी, १९९४

रजि० संख्या
AD~96

विज्ञान-योग ५)

अध्यात्म-योग ५)

ध्यान-योग ५)

एवं

विचार योग ४)

सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक : ऋतशील शर्मा
चण्डी - कार्यालय, परावाणी प्रेस, प्रयाग २११००६